Chapter-6

अध्याय ६

वातावरण प्रधान ऐतिहासिक उपन्यास

पूर्ववर्ती अध्यायों में विवेचित हिन्दी और गुजराती के विशुद्ध ऐतिहासिक उपन्यास एवं समन्वयान्वित ऐतिहासिक उपन्यास के अतिरिक्त ऐसे उपन्यासों की भी एक परम्परा मिलती है, जो घटना और तथ्यों में इतिहास के प्रति इतने अनुवर्ती नहीं दिखाई पड़ते। इनमें परंपरावाले घटनाओं, चरित्रों और परिस्थितियों को कल्पना के सहारे इस रूप से प्रस्तुत करते हैं, जो वस्तुतः ऐतिहासिक सत्य भले ही नहीं हो, किन्तु उक्त सत्य की प्रतीति अवश्य करा सकें। ऐसे उपन्यासों को वातावरण प्रधान ऐतिहासिक उपन्यास कहा जा सकता है। ऐसे उपन्यासों में उनके लेखकों की कला-साधना, वातावरण को इतिहास के अनुरूप सर्जित कर पाठकों को उसकी संभाव्यता को स्वीकार करने में विवश करती है, किन्तु वे प्रायः यह आवश्यक नहीं समझते कि वर्णित प्रत्येक घटना-चरित्र और प्रासंगिक कथाएं इतिहास-अनुमोदित ही हों। अतः यह स्वाभाविक ही है कि इन उपन्यासों के लेखन में इनके लेखक पूर्व विवेचित ऐतिहासिक उपन्यासों की अपेक्षाकृत कला के संयोजन में अधिक स्वतंत्र रह सकते हैं। केवल वस्तुगत नहीं, तो संभाव्यतागत सत्य की विवृति का बंधन तो इन्हें भी स्वीकार करना होगा।

प्रथम अध्याय के अन्त में यह निर्दिष्ट किया जा चुका है ऐसे उपन्यासों में कथानक और पात्रों की अपेक्षा वातावरण अपने शुद्ध रूप में विद्यमान रहता है इसीलिये इनका उपर्युक्त नामाभिधान किया गया है।

श्री शिवनारायण श्रीवास्तव ने ऐतिहासिक वातावरण मात्र की पृष्ठभूमि पर स्थित उपन्यासों को प्रेमाख्यानक ऐतिहासिक उपन्यास माना है, और ऐतिहासिक कथावस्तु, पात्र, और वातावरण वाले ऐतिहासिक

उपन्यासों को शुद्ध ऐतिहासिक उपन्यास।[1] डा० सिंहल ने अपने शोध-प्रबंध " उपन्यासकार वृन्दावनलाल वर्मा " में इसी का समर्थन किया है।[2] उनके मतानुसार ऐतिहासिक प्रेमाख्यानक उपन्यासों में " उपन्यासकार ऐतिहासिक तथ्यों को सजीव तथा शृंखलाबद्ध स्वरूप प्रदान करने के लिए निज की कल्पना तथा व्याख्या का सहयोग देता है।[3] इससे यह स्पष्ट है कि श्री शिवनारायण श्रीवास्तव तथा डा० शशिभूषण सिंहल ने जिन्हें ऐतिहासिक प्रेमाख्यानक उपन्यास माना है, उन्हें यहाँ वातावरण प्रधान ऐतिहासिक उपन्यास के रूप में रखा गया है। यहाँ यह लक्ष्य कर लेना आवश्यक है कि उनके द्वारा मान्य शुद्ध ऐतिहासिक उपन्यासों में भी प्रेम की कहानियाँ हो सकती हैं, अतः वर्गीकरण में इस आधार को स्वीकार करना युक्ति संगत नहीं जान पड़ता। दूसरी बात यह है कि कल्पना तत्त्व के विनियोजन के परिमाण और शिल्प को विषय-वस्तु की संज्ञा देना अवैज्ञानिक ही कहा जायगा। — वैसे " प्रेमाख्यानक " विशेषण से ही यह स्पष्ट है कि अनुसंधाता ने वर्गीकरण का आधार उसे ग्रहण करके भी व्यवहार में एक प्रकार से अस्वीकार किया है। अतः उपर्युक्त कारणों के प्रकाश में लेखक इस कोटि के उपन्यासों को वातावरणप्रधान ऐतिहासिक उपन्यास की संज्ञा देना अधिक उपयुक्त और वैज्ञानिक मानता है।

इस कोटि में हिन्दी की दस तथा गुजराती की लगभग चार-पाँच रचनाएँ रखी जा सकती हैं। विवेचनगत सुविधा के विचार से प्रस्तुत अध्याय में भी केवल प्रतिनिधि रचनाओं को ही अनुशीलन के लिए ग्रहण किया गया है, जिनकी सूची कालक्रम के अनुसार इस प्रकार है।

---

१ श्री शिवनारायण श्रीवास्तव, हिन्दी उपन्यास, पृ० ४६ ४६-८

२ डा० शशिभूषण सिंहल, उपन्यासकार वृन्दावनलाल वर्मा, संस्करण, १९६० ई०, पृ० २५

३ वही

हिन्दी के वातावरण-प्रधान ऐतिहासिक उपन्यास :

(१) विराटा की पद्मिनी	: वृन्दावनलाल वर्मा	:	१९३६
(२) बहती रेता	: गुरुदत्त	:	१९४९
(३) चारुचंद्र लेख	: हजारी प्रसाद द्विवेदी	:	१९६२

गुजराती के वातावरण-प्रधान ऐतिहासिक उपन्यास :

(१) मारेलो अग्नि	: र० व० देसाई	:	१९३५
(२) आम्रपाली	: धूमकेतु	:	१९५४
(३) दीपनिर्वाण	: दर्शक	:	१९४४

अनावश्यक विस्तार के निवारण के लिए प्रस्तुत वर्ग की रचनाओं के विषय में भी इनके शिल्प और प्राप्य इतिहास पक्ष का समग्रतया अनुशीलन करना ही उपयुक्त होगा ।

कथावस्तु :

डा० वृन्दावनलाल वर्मा के विशुद्ध और समन्वयान्वित ऐतिहासिक उपन्यासों का विवेचन हम पूर्ववर्ती अध्यायों में कर आये हैं । " विराटा की पद्मिनी " १७०० ईस्वी के आसपास व्याप्त सामन्ती विलासिता, और धर्मांधता की कथा लिये हुए है । गुरुदत्त की " बहती रेता " बुद्ध के सौ वर्ष पश्चात् राजनीति-लिप्त बौद्ध धर्म और ब्राह्मण धर्म के संघर्ष के कारण वैशाली गण-राज्य के विलय की कथा प्रस्तुत करती है ।

आचार्य हजारी प्रसाद की " चारु चंद्रलेख " बारहवीं शताब्दी में सिद्धियों के जाल में फंसे भारतीय समाज की तुरुष्क सेना के

आक्रमण के समय अनुभूत विवशता की स्थिति व्यक्त करता है। इस प्रकार उपर्युक्त तीनों उपन्यास प्राचीन और मध्यकालीन भारतीय इतिहास के विभिन्न पक्षों को प्रस्तुत करते हैं।

विराटा की पद्मिनी :

ईस्वी पश्चात् अठारहवीं शताब्दी की एक रोमांस पूर्ण कृति है। इसमें देवी का अवतार समझी जानेवाली विराटा की पद्मिनी कुमुद और दिलीपनगर के राजा नायकसिंह के दासी-पुत्र कुंवरसिंह की प्रणय-कथा है। पालर के नरपतिसिंह दांगी की कन्या कुमुद के अपूर्व सुन्दरी होने के कारण लोगों का उसे देवी समझ दर्शनार्थ आना, कुंवरसिंह का उसके प्रथम दर्शन में उसके प्रति आकर्षित होना, विलासी राजा नायकसिंह और कालपी के सूबेदार का कुमुद की प्राप्ति के लिये युद्ध करना, युद्ध में नायकसिंह की मरणावस्था पर दूल्हे देवीसिंह द्वारा उसके प्राणों की रक्षा करना और शीघ्र उसकी मृत्यु पर देवीसिंह को राज्य-प्राप्ति, और कुंवरसिंह का स्वत्व वंचित होना, नरपतिसिंह का कुमुद के साथ अपने कुटुम्बी सबदलसिंह के पास विराटा आना, अलीमर्दान का विराटा पर आक्रमण, दांगियों का आत्म-रक्षार्थ जौहर, तोपों के युद्ध में गढ़ी के प्रांगण में कुमुद और कुंवर का मिलन तथा विदाई, देवीसिंह का भी विराटा की रक्षा के लिये चढ़ आना, युद्ध में कुंवर की मृत्यु, बेतवा में कुमुद की जलसमाधि और देवीसिंह तथा अलीमर्दान के मध्य संधि आदि उसकी आधिकारिक कथा के सूत्र हैं।

इसकी ऐतिहासिकता के सम्बन्ध में डा० शशिभूषण सिंहल ने लिखा है — " लगभग सन् १७०० की विराटा गांव (परगना-तहसील मौंढ, जिला झांसी) की दस्तूर देही, मिसिल बंदोबस्त, सन् १८६२ में इस घटना का उल्लेख है। उर्दू में लिखा हुआ है, " विराटा में दांगी जाति की "पद्मिनी "

थी । नवाब कालपी के हमले की वजह से उसे बेतवा नदी में समाधि लेनी पडी ।"[1] सन् १७०० ईस्वी के आसपास की घटना का बिना सम-सामयिक आलेख के आधार के, १६२ वर्ष बाद मिसिल के रूप में लिखा जाना ऐतिहासिक सत्य के रूप में अंकन संदिग्धता से परे नहीं कहा जा सकता । इतने समय बाद लिखित रूप में लिये जाने का आधार वस्तुतः जनश्रुति ही रही होगी । इस जनश्रुति की प्रतीति वर्माजी ने सुरतानपुर के नन्दू पुरोहित एवं एक वयोवृद्ध दांगी से तहकीकात करके की है ।[2] आज भी विराटा में उसकी समाधि पर हर साल मेला लगता है और विराटा के आसपास यह जनश्रुति प्रचलित है । अतः कुमुद से सम्बन्धित घटना की सत्यता से इन्कार भी नहीं किया जा सकता । डा० सिंहल ने कुमुद के ५५ वर्ष बाद की दतिया राज्य प्राप्ति की कथा के भी इसके साथ संलग्न होने की बात कही है ।[3] किन्तु श्री गोरेलाल तिवारी के अनुसार यह घटना संवत् १९१४ अर्थात् १८५७ ईस्वी की है ।[4] अतः यह घटना कुमुद की घटना से ५५ वर्ष की अपेक्षा, उन्हीं के कथनानुसार, १६७ वर्ष बाद की ठहरती है । रण-दूल्हा की कथा भी कुछ परिवर्तन कर राज्य-प्राप्ति की कथा के साथ सम्बद्ध

१ डा० शशिभूषण सिंहल, उपन्यासकार वृन्दावनलाल वर्मा, पृ० ६२

२ विराटा की पद्मिनी, परिचय, पृ०

३ डा० सिंहल, उपन्यासकार वृन्दावनलाल वर्मा, पृ० ६२

४ श्री गोरेलाल तिवारी, बुंदेलखंड का संक्षिप्त इतिहास, पृ० २७५
" दतिया के महाराजा विजय बहादुर का देहांत संवत् १९१४ में हुआ । इनके कोई पुत्र न था इससे इनके दत्तक पुत्र भवानीसिंह संवत् १९१४ में राजा हुए । भवानीसिंह के विरुद्ध मृत महाराजा के दासी-पुत्र अर्जुन सिंह ने झगडा किया परंतु अंग्रेजों की सहायता से वह झगडा शांत कर दिया गया ।", पृ० २७४ — उपन्यास के नाथसिंह और विजय बहादुर, तथा देवीसिंह और भवानीसिंह, एवं कुंवर हिस और अर्जुनसिंह एक हैं । वर्माजी ने उपन्यास में उनके नाम मात्र बदल दिये हैं ।

कर दी गई है। इस प्रकार परवर्ती काल की घटनाओं को पूर्ववर्ती काल से सम्बद्ध कर देने से इसकी ऐतिहासिकता का व्यतिक्रम हो जाता है। इस लिये मुख्य घटना और स्थल की सत्यता को लक्ष्य कर संभाव्यता के आधार पर इसके वातावरण को अवश्य ऐतिहासिक कहा जा सकता है, और इसे वातावरण प्रधान ऐतिहासिक उपन्यास।

डा० शशिभूषण सिंहल ने इसे ऐतिहासिक प्रेमाख्यानक उपन्यास माना है। ऐतिहासिक प्रेमाख्यानक उपन्यासों की कोटि के सम्बन्ध में प्रस्तुत अध्याय के आरम्भ में स्पष्ट किया जा चुका है। दूसरी बात यह है कि डा० सिंहल ऐतिहासिक प्रेमाख्यानक उपन्यास उन्हें मानते हैं, जिनमें कल्पना का समावेश पर्याप्त मात्रा में हो, किन्तु इसके साथ ही वे यह भी कहते हैं कि " "विराटा की पद्मिनी " के पात्र और कथा भी काल्पनिक नहीं है। " [1] अतः डा० सिंहल की उपर्युक्त दोनों मान्यताएं परस्पर विरोधी प्रतीत होती है। वस्तुतः पात्र और घटना की पूर्वनिर्दिष्ट वस्तुस्थिति तथा भिन्न कालों के ऐतिहासिक वातावरण की ही प्रधानतया सृष्टि के कारण इसे वातावरण-प्रधान ऐतिहासिक उपन्यास कहना ही अधिक उचित होगा।

इसकी कथावस्तु सुसम्बद्ध सुगठित और पर्याप्त रूप से रोचक है। कुमुद में देवीत्व के आवरण से कथानक में आद्योपान्त कुतूहल की सृष्टि से रस-संचार बना रहता है। घटनाओं में सर्वत्र तीव्रता और प्रवाह है तथा साथ ही विविध दृश्यों के आयोजन से इसमें प्रभावोत्पादकता भी पर्याप्त मात्रा में विद्यमान है।

" बहती रेता " की कथावस्तु वैशाली और मगध के राजनीतिक

१ डा० शशिभूषण सिंहल, उपन्यासकार वृन्दावनलाल वर्मा, पृ० ४ २५

एवं सामाजिक संघर्ष की गाथा है। वैशाली का गणराज्य गणपति देवधर्मा के प्रशासन में एक सुस्थिर और समृद्धिशाली राज्य था। अवध में युवा मुरहारी विक्रम सिंहासनारूढ था। पिता के निधन पर मुरहारी तीर्थाटन के लिये जाता है, तो पीछे से आर्य-राज्य-द्वेषी महामात्य रिपुदमन वैशाली के सेठ भूधर और महाप्रभु कल्याण की सहायता से राज्यकोष का गबन कर अवध के वैश्यों और शूद्र युवकों के संगठन द्वारा राज्य परिवर्तन कर स्वयं राजा बनना चाहता है। किन्तु उसके वैशाली के देवधर्मा से सहायतार्थ पत्र-व्यवहार करने पर देवधर्मा अपने मित्र-पुत्र मानुमित्र को अवध की वस्तु-स्थिति का पता लगाने भेजता है, जो रिपुदमन के राज्य-परिवर्तन की योजना समाप्त कर स्वयं अवध का महामात्य बन जाता है। उधर अवध के राज्यकोष के धन का संग्रह करने वाले वैशाली के सेठ भूधर और अर्थ मंत्री की तलाशी और उन पर अभियोग की मांग करने पर वैशाली गण-राज्य के वैश्य और शूद्र गणपति देवधर्मा के विरुद्ध हो उन्हें अपदस्थ कर देते हैं। परिणामतः वैश्य उपगणपति लक्ष्मीकांत गणपति बन जाता है और वैशाली में ब्राह्मण-क्षत्रिय वर्ग के प्रति वैश्य और शूद्र वर्ग की द्वेषाग्नि वैशाली के सर्वनाश का कारण बनती है। इसके मूल में बौद्ध धर्म का विशेष योगदान रहा। अन्ततः वैशाली और अवध दोनों राज्य एक साम्राज्य में परिणत हो जाते हैं। इसकी ऐतिहासिकता के सम्बन्ध में लेखक का कथन है कि " महात्मा बुद्ध की मृत्यु के लगभग एक सौ वर्ष पश्चात्, वैशाली, मगध, अयोध्या, मल्ल इत्यादि राज्यों की अवस्था को इस उपन्यास की पृष्ठ-भूमि के रूप में लिया है। "[1] तथागत बुद्ध की निधन तिथि ४८७ ई० पू० है।[2] और इसके लगभग डेढ सौ वर्ष पश्चात् (३२६ ई० पू०)[3] भारत पर सिकन्दर का

१ श्री गुरुदत्त, बहती रेता, भूमिका, पृ० ५

२ श्री वी० डी० महाजन, प्राचीन भारत का इतिहास, पृ० १४७

३ वही, पृ० २०३

आक्रमण होता है। इस समय उत्तर-पश्चिमी भारत में गांधार कैकय, कठ आदि गणों के अस्तित्व का उल्लेख मिलता है, किन्तु पूर्व के वैशाली का नहीं। अतः यह ऐतिहासिक संभाव्यता सत्य प्रतीत होती है कि उक्त परिस्थितियों में अवध के साथ वैशाली का विलय हुआ हो।

प्रस्तुत उपन्यास में कथावस्तु की रोचकता और मनोरमता के लिये लेखक ने रहस्यान्वेषी गुप्तचरों, और प्रणयी युगलों के माध्यम से कूट-नीतिक गतिविधियों का प्रयोग किया है। कृति के अन्तर्वर्ती संघर्ष से घटनाओं में गतिशीलता और कौतूहल आद्योपान्त बने रहते हैं। कथावस्तु का गठन सुनियोजित और शृंखलाबद्ध है।

" चारु चन्द्र लेख " बारहवीं शताब्दी के अंत और तेरहवीं शताब्दी के आरंभ के वातावरण को लक्ष्य में रख कर लिखा गया उपन्यास है। इसकी मुख्य कथा इस प्रकार है। अवंतीराज सातवाहन का एक योगी के निर्देश से निकटवर्ती वन में नागनाथ को भोजन कराने के लिये उत्सुक चन्द्र लेखा से मिलना और रानी के रूप में उसे ग्रहण कर राजधानी में वापस आना, शीघ्र ही नागनाथ की प्राप्ति इसी समय दिल्ली के सुल्तान की सेनाओं के आक्रमण के समाचार, युद्ध की विभीषिका को समाप्त करने के लिये रानी का नागनाथ के कौतिकेयी रस की सिद्धि में सहयोग देना, किन्तु धुंडकेश्वर द्वारा रस सिद्धि ~~सम्भिमें~~ हथिया ने के लिये सातवाहन के भतीजों की सहायता से रस-सिद्धि पूर्व ही नागनाथ की हत्या, रानी का उसे गोरखनाथ द्वारा जीवित कराने के लिये अमोघ वज्र की ओर प्रयाण, प्रजा को उद्बुद्ध करने के लिये उनका रानी को भगवती विष्णुप्रिया के पास रखकर निकल पड़ना, यहाँ सातवाहन, नाटीमाता, और मैना की सहायता से, सिद्धि के दुष्प्रभावों से मुक्त होने पर रानी को स्वास्थ्य-लाभ, किन्तु यवनों के आक्रमण से रानी का पुनः विमुक्त हो जाना,

आक्रमक युद्ध कर शत्रु को समाप्त करने के लिये सातवाहन का अशोक चल्ल के पास जाना, किन्तु उसकी कायरता और मैनसिंह द्वारा शाह के रूप में मित्राघात के कारण सैन्य-योजना का विफल होना इसकी आधिकारिक कथा है। इसके साथ मैनसिंह और बोधा प्रधान की प्रासंगिक कथा तथा नाथ-पंथियों की अवान्तर कथाएं भी विद्यमान हैं।

नागनाथ (नागार्जुन) के कोटिवेधी-रस की सिद्धि में राजा सातवाहन की रानी चन्द्रलेखा का सहयोग और उसके भतीजों द्वारा नागनाथ की हत्या मेरुतुंग सूरीकृत प्रबंध चिंतामणि पर आधारित है।[1] नागनाथ के नाम में लेखक ने अन्तर किया है। बारहवीं शताब्दी के अन्त में तथा तेरहवीं के आरंभ में कुतुबुद्दीन ऐबक के चन्दवाडा (कन्नौज) कलिंजर (बुंदेलखण्ड) और मालवा के कुछ भाग, पर आक्रमण और अधिकांश भाग उत्तरभारत पर आधिपत्य स्थापित कर लेना इतिहास सम्मत है।[2] अतः कथावस्तु के मुख्य पात्र और युगीन पृष्ठभूमि सर्वथा ऐतिहासिक है।

कथावस्तु के संगठन में लेखक ने आधिकारिक और प्रासंगिक कथाओं का एक ही लक्ष्य से युक्त कर ऐसे सामंजस्य की सृष्टि की है कि वे सभी मुख्य कथा के महत्त्व पूर्ण अंश लगते हैं। विविध सिद्धियों और उपलब्धियों की घटनाओं द्वारा कथावस्तु को आद्योपान्त रंजनात्मक स्वरूप प्रदान करने का भी आयोजन किया गया है किन्तु कई स्थानों पर लेखक की वर्णन-प्रियता से कथावस्तु के सहज-प्रवाह में शिथिलता उभर आई है। ऐसे स्थलों पर कथा अवरुद्ध हो जाती है, उपन्यासकार पिछड़ जाता है और उनका आचार्य वस्तु-विश्लेषण में व्यस्त दृष्टिगोचर होता है।

१ मेरुतुंग प्रबंध चिंतामणि, नागार्जुन प्रबंध, पृ० १९६

२ श्री वी० डी० महाजन, मुस्लिम रूल इन इन्डिया, पृ० ६४ और ७४

गुजराती के वातावरण प्रधान ऐतिहासिक उपन्यासों की कथावस्तु :

" भारेलो अग्नि " श्री रमणलाल वसंतलाल देसाई का " फांसी की रानी " और " बेक्सी का मजार " के अध्ययन के बाद, अठारह सौ सत्तावन के विप्लव पर उपलब्ध तीसरी कृति है, किन्तु अपने स्वरूप में पहली दोनों कृतियों से भिन्न। कृति की प्रस्तावना में श्री देसाई ने स्वयं लिखा है - " कथानक (वार्ता) के पात्र कल्पित हैं। ऐतिहासिक नाम धारण करने वाले दो तीन पात्रों की कार्य शृंखला भी कल्पित है। केवल विप्लव को प्रेरित करने वाले तत्त्व और उसकी विफलता के कारणों का कथावस्तु के संघटन में कुछ उपयोग किया गया है।[1] इसके आधार पर यह कहा जा सकता है कि कथावस्तु का संगठन एक वैचारिक भूमिका को लेकर लिखा गया है तथा सोद्देश्य है। कृति के मुख्य पात्र और उपन्यास की घटना-शृंखला सर्वथा कल्पनाश्रित हैं, केवल उसका परिवेश ऐतिहासिक है।

" भारेलो अग्नि " में अंग्रेजों की कूटनीति, उसके कारण हुई देशी राज्यों की विपन्न स्थिति, एवं भारतीय सिपाहियों के प्रति अपमानजनक व्यवहार, १८५७ के विप्लव के प्रेरक तत्त्व हैं, एवं विप्लवकारियों की अनुशासन हीनता तथा योग्य नेतृत्व का अभाव उसकी विफलता के लिये उत्तरदायी कारण हैं। यह एक ऐतिहासिक सत्य है।[2]

१ श्री रमणलाल वसंतलाल देसाई, भारेलो अग्नि, पृ० ९

२ (I) स्वातंत्र्य वीर सावरकर, दी इन्डियन वार आफ इन्डिपेन्डेंस,
(II) मेजर बी० डी० बसु, दी राइज आफ क्रिश्चियन पावर इन इन्डिया, पृ० ५५२-६२
(III) श्री सुंदरलाल, भारत में अंग्रेजी राज, द्वितीय खंड, पृ० ८०४-५७२
(IV) डा० ईश्वरी प्रसाद, भारत का इतिहास, भाग-२, पृ० ३९१-४२१

प्रस्तुत वातावरण के निरूपण के लिये लेखक ने क्रीमिया-युद्ध के यशस्वी सैनिक एवं विद्रोही गौतम तथा सत्यनिष्ठ, अहिंसा परायण, आचार्य रुद्रदत्त की पौत्री कल्याणी की प्रणय-गाथा की सृष्टि की है। इसके साथ ही कृति में अंग्रेजी शासन के विरुद्ध संघर्ष को दोहरे रूप में व्यक्त किया गया है। एक है सशस्त्र संघर्ष, जिसके संचालक हैं, नानाराव के सहयोगी तात्या टोपे, झांसी की रानी लक्ष्मी बाई, मंगल पांडे, सैयद अजीज उल्ला और गौतम। दूसरा संघर्ष है, सत्य और अहिंसा पर आधारित, जिसके सेनानी हैं, आचार्य रुद्रदत्त, त्र्यम्बक और कल्याणी, जिनके द्वारा लेखक अपने युग की चेतना को पूर्ववर्ती १८५७ के वातावरण में आरोपित कर एक ऐतिहासिक व्यतिक्रम उपस्थित करता है।

कृति के कथावस्तु को लेखक ने कई रोमांचक और संघर्षपूर्ण प्रसंगों के साथ संघटित किया है, जिससे कथावस्तु में पाठक की कुतूहल वृत्ति आद्योपान्त बनी रहती है। कुछ एक प्रसंग जैसे समुद्री जहाज से भगे कैदी गौतम के पास घास की गंजी में बंदूक होना, क्रीमिया में संध्या समय नव पांडे भोजन बनाता है, जेबसन का किसी रमणी के साथ विहार के लिये निकलने पर उसका संगीन से गौतम पर हमला करना आदि सैनिक दृष्टि से सर्वथा अस्वाभाविक हैं। इनके अतिरिक्त कथावस्तु के निर्वाह में लेखक का कौशल अद्भुत है।

" आम्रपाली " के कथावस्तु की मुख्य घटनाएं और पात्र वही हैं, जिनका विवेचन हम " वैशाली की नगरवधू " के संदर्भ में कर आये हैं। यहां कृतिकार का मुख्य लक्ष्य है वैशाली और मगध के पारस्परिक राजनीतिक संघर्ष का निरूपण करना। " वैशाली की नगरवधू " से " आम्रपाली " के कथावस्तु में अंतर यही है कि यहां बिम्बसार और अजातशत्रु में संघर्ष का आरंभ मगध राज बिम्बसार के राजकुमार हल्ल, विहल्ल को एक कोटि सुवर्ण की मौक्तिक माला और सेचनक हाथी के देने से होता है। महामात्य वर्षकार

द्वारा इसका समाधान हो जाता है। इसमें बिम्बसार और आम्रपाली का मिलन वैशाली पर आक्रमण के समय की अपेक्षा,इ मगध से वैशाली में तथागत के पदार्पण के समय निरूपित है। इस पर अजात शत्रु के वैशाली पर आक्रमण के लिए उद्यत होने पर आम्रपाली बिम्बसार से उत्पन्न कुमार को मगध भेज कर उसका निवारण करती है। बिम्बसार द्वारा हल्ल विहल्ल को एक कोटि का मौक्तिक हार और सेचनाक हाथी देना, एवं मगध और वैशाली का संघर्ष एक ऐतिहासिक सत्य है।[1]

प्रस्तुत उपन्यास के कथावस्तु को लेखक ने सुशृंखलित एवं सुगठित रूप में प्रस्तुत किया है। कृति में रोचकता और सजीवता लाने के लिए लेखक ने बंधुल मल्ल का अपनी पत्नी को वैशाली की पुष्करिणी में स्नान करवा कर उसकी दोहद इच्छा पूर्ण करना, उदयन की रानी मागंदिका और श्यामिका का आंतरिक कलह, वर्षकार की कूटनीतियां, महाली का धनुष-प्रयोग आदि अद्भुत प्रसंगों की रचना की है। कई स्थलों पर वर्णन-प्रियता के कारण कथावस्तु में गत्यवरोध भी लगता है। यदि इसे मर्यादित रूप में रखा होता, तो वह कृति में उत्कर्ष विधायक होता।

" दीप निर्वाण " जैसा कि शीर्षक से ध्वनित है, प्राचीन भारत के सुखी और स्वतंत्र गणराज्यों के अवसान से सम्बद्ध है।[2] पहली शताब्दी ईस्वी पूर्व के आसपास जबकि महाक्षत्रप शक मेनेन्द्र के भारत-आक्रमण के समाचार आते हैं, तो वाहीक संघ के कठ, ब्राह्मणक और मालव के अतिरिक्त शेष गण मगध के प्रभाव में आ जाते हैं। मगध इस अवसर से लाभ उठाने के लिये एक ओर

१ श्री वी० डी० महाजन, प्राचीन भारत का इतिहास, १८३-८४

२ दीप निर्वाण, पृ० १

शक क्षत्रपों से संधि करता है, तो दूसरी ओर नंदीग्राम (मालव) में समाज के समय एकत्रित गणाधीशों की एक सभा में गणों के सम्मुख मिनेन्द्र के आक्रमण से आत्म रक्षार्थ मगध के साथ ऐक्य स्थापित कर लेने का प्रस्ताव रखता है। मालव कठ और ब्राह्मणक इससे सहमत नहीं होते। परिणामतः मगध सेनापति वसुमित्र, कठ, ब्राह्मणक, और मालव पर एक साथ चढ़ाई कर देता है। कठ का गण-सेनापति गण-द्रोह कर उससे मिल जाता है। इसके पश्चात् कुछ मगध-सेना और कुछ मीननगर के शक क्षपत्र की सेना से ब्राह्मणक गण की राजधानी उडुग्राम पर घेरा डाल स्वयं नन्दि ग्राम के नगर श्रेष्ठी, कंटक शोधक के पुत्र सुदत्त की सहायता से नन्दि ग्राम (मालव गण) पर घेरा डालता है। पांच महीने के घेरे में नगर का बड़ा विध्वंस हो जाता है। अग्नि-वर्षा, अन्नाभाव महामारी, अकर्मण्यता से विवश हो मालवी सैनिक और नागरिक नगर द्वार खोलकर अचानक आक्रमण कर कुछ अरावली की पर्वत शृंखलाओं में और कुछ लवणद्वीप में आश्रय लेते हैं। लवण द्वीप के मालवियों को भी घेरा डाल मगध-सेना समाप्त कर देती है। अंततः यद्यपि ब्राह्मणक सेनानी आनन्द मगध सम्राट को कैदी बना उससे मगध सेना को वाहीक संघ के प्रदेश से हटा लेने और नन्दिग्राम की पुनर्रचना के मूल्य का दंड देने के वचन के साथ कथा समाप्त होती है। अंत में यद्यपि सुखांत है, तथापि काल चक्र के सम्मुख गणों के जीवन रूपी दीप का निर्वाण ही सिद्ध होता है।

गणों की इस करुण कथा को रोचक और जीवन्त स्वरूप प्रदान करने के लिये श्री दर्शक ने कठ गण वासी देवहूती और ब्राह्मणक गण के अध्यक्ष आत्रेय की पुत्री गौतमी, आत्रेय के दौहित्र आनंद और मालवगण के महाकाश्यप की पुत्री सुचरिता, तथा महाक्षत्रप शक मेनेन्द्र और तक्षशिला के आचार्य ऐल की शिष्या कृष्णा जैसे प्रेमी युगलों की प्रासंगिक कथाओं का भी आयोजन किया है।

श्री दर्शक उपन्यास की कथावस्तु के काल के सम्बन्ध में आरंभ में ही लिखते हैं – " महाभाग ईशु के जन्म पहले और भगवान तथागत के परिनिर्वाण के बाद की पांचवी सदी की बात है । " [1] इतिहासकार बुद्ध का परिनिर्वाण ४८७ ईस्वी पूर्व में मानते हैं । [2] पाली भाषा की पुस्तक " मिलिन्द पहण " में भी मैनेन्द्र, जो प्रस्तुत उपन्यास की कथावस्तु का एक मुख्य पात्र है, को तथागत के परिनिर्वाण के बाद पांचवी शती में जीवित बताया गया है । [3] तदनुसार ईस्वी पूर्व पहली शती में विद्यमान उपन्यास के मैनेन्द्र और इतिहास के मैनेन्द्र के एक होने का एक सामान्य विचार आता है । इतिहास के मैनेन्द्र की भांति उपन्यास का मैनेन्द्र भी महान शक्तिशाली आक्रान्ता है और बाद में बौद्ध धर्म से प्रभावित बताया गया है । किंतु इतिहास के मैनेन्द्र का यवन होना, [4] उपन्यास के मैनेन्द्र का शक होना ; इतिहास के मैनेन्द्र का काल ईस्वी पूर्व द्वितीय शताब्दी के मध्य के आसपास होना, उपन्यास के मैनेन्द्र का ईस्वी पूर्व प्रथम शताब्दी में होना ; इतिहास के मैनेन्द्र का उत्तर-पश्चिम भारत से सुदूर पूर्व में मगध साम्राज्य पर पुष्यमित्र शुंग के सिंहासनारोहण से पूर्व आक्रमण करना, उपन्यास के मैनेन्द्र का तक्षशिला के आचार्य का शिष्य होने के कारण उसके प्रभाव से तक्षशिला को अपना सीमान्तवर्ती प्रदेश मान लौट पड़ना आदि तथ्यों का इतिहास से कोई मेल नहीं बैठता । अतः मैनेन्द्र और अग्निमित्र (१४९ ई० पू०) विषयक कथावस्तु को ऐतिहासिक नहीं माना जा सकता ।

१ दीप निर्वाण, पृ० १

२ श्री वी० डी० महाजन, प्राचीन भारत का इतिहास, पृ० १४०

३ वही, पृ० २१७

४ वही,

मैनेन्द्र विषयक तथ्य, पृ० २१५ से २१९ तक में दिये हैं ।

" मिलिन्द पहृण " के आधार पर कथावस्तु के काल को अवश्य ऐतिहासिक माना जा सकता है। किन्तु यह स्पष्ट है कि उपन्यास के मैनेन्द्र और अग्निमित्र लेखक की स्वतंत्र कल्पना-सृष्टि है। अतः श्री उमाशंकर जोशी के कथनानुसार राज्यलिप्सु मगध साम्राज्य और गणों की स्थिति का वातावरण अवश्य ऐतिहासिक कहा जा सकता है।[1]

" दीप-निर्वाण " में लेखक उपन्यास की मुख्य कथा को रोचकता और मनोरमता प्रदान करने के लिये न केवल प्रासंगिक कथाओं की उद्भावना करता है, अपितु मयूर-युगल-नृत्य, मगरवध, गणों के समाज, कृष्णा का धनुर्विद्या का प्रयोग, मैनेन्द्र और शक सरदारों को भोजन के स्थान पर रत्नादि का परोसा जाना आदि विमुग्ध कारी दृश्यों का भी उसने आयोजन किया है। व्यापक विस्तार के उपरांत भी कथावस्तु सुशृंखलित और सुनियोजित है। प्रथम खंड में कुछ वर्णनात्मक स्थलों को छोडकर वह गतिशील है।

तुलना और निष्कर्ष :

हिन्दी और गुजराती के वातावरण-प्रधान ऐतिहासिक उपन्यासों के कथावस्तु को पूर्ववर्ती अध्ययन के आधार पर हम उन्हें निम्नांकित रूप में पाते हैं :

(१) इतिहास के किसी पात्र और उसकी किसी घटना से युक्त उपन्यास।
(२) इतिहास के समकक्ष आधार तथा जनश्रुतियों पर अवलंबित उपन्यास।
(३) केवल ऐतिहासिक परिवेश से युक्त उपन्यास।

प्रथम कोटि में आने वाले ऐतिहासिक उपन्यास हैं, " चारु

१ दीप निर्वाण, श्री जोशी का मनहर मनभर, पृ० ११

चंद्रलेख " मेरुतुंगाचार्य कृत प्रबंध चिंतामणि के नागार्जुन प्रबंध पर आधारित है एवं " आम्रपाली " के पात्र और उसकी सम्बद्ध घटना भी इतिहास-ग्रन्थों द्वारा अनुमोदित। नाथपंथ की सिद्धियाँ जैसे कथावस्तु के विविध अंशों का लालित्यपूर्ण वर्णन " चारु चन्द्रलेख " की खास विशेषता है। इससे वर्णन में अवश्य रसात्मकता का समावेश होता है, किन्तु उसके गठन में शिथिलता आ जाती है। " आम्रपाली " में कूटनीतियों के आकर्षक प्रयोग और बिम्बसार-आम्रपाली का रोमांश है।

द्वितीय कोटि में आता है, " विराटा की पद्मिनी "। इसकी मुख्य कथा जनश्रुतियों पर आधारित है। जनश्रुतियों की सजीवता से इसकी ऐतिहासिकता विश्वसनीय है। बुंदेलखंड के भौगोलिक वातावरण की जीवन्त सृष्टि इसकी दूसरी विशेषता है। गुजराती की रचनाओं में ऐसा प्रयोग नहीं मिलता।

तीसरी कोटि में उपन्यास हैं -- " बहतीरेता ", " भारेलो अग्नि " और " दीप निर्वाण "। तीनों इतिहास के काल विशेष पर आधारित और सोद्देश्य रचनाएं हैं। " बहती रेता " में लेखक वैशाली के विध्वंस के लिए बौद्ध-धर्म और आर्य-मत के संघर्ष को उत्तरदायी ठहराता है, जबकि १८५७ की क्रांति पर आधारित " भारेलो अग्नि " में रुद्रदत्त के माध्यम से लेखक समसामयिक अहिंसा के सिद्धान्त की प्रस्तुति करता है। किन्तु श्री देसाई द्वारा इस प्रकार पूर्ववर्ती काल में परवर्ती काल के तथ्य का आरोपण कालक्रम-दोष कहा जा सकता है। बौद्धकालीन गणों की स्थिति का चित्रण करनेवाले " दीप निर्वाण " में रोमांचक तत्त्व और रोमांस है, किन्तु तक्षशिला में रत्नादि का परोसना अद्भुत होते हुए भी अप्रतीति कर लगता है। गठन की दृष्टि से तीनों का कथा-वस्तु सुगठित है।

चरित्र-चित्रण :

प्रस्तुत वर्ग के ऐतिहासिक उपन्यासों के कथावस्तु के अध्ययन से यह स्पष्ट है कि इनमें इतिहास-प्रसिद्ध पात्रों स्वल्प संख्या में ही प्राप्य हैं। इनके अधिकांश पात्र कृति में निहित लक्ष्य के अनुसार लेखक की कल्पना-सृष्टि के ही परिणाम हैं और लेखक उन्हें ऐतिहासिक उपन्यासों में प्रस्तुत कर पाठकों के मन में उनके ऐतिहासिक होने की भ्रांति उत्पन्न करता है। इसके लिये उसे इतिहास और कल्पना का कलात्मक विनियोजन करना पड़ता है। इतिहास के जिन पात्रों की चारित्रिक विशिष्टताएं, उसे सीधे इतिहास से प्राप्त हो जाती हैं, उन्हें वह अपनी औपन्यासिक कला के सहारे संवारता है। किन्तु जहां पात्र ऐतिहासिक न हों, अपितु कल्पनाप्रसूत हों, वहां उसके लिये यह आवश्यक है कि वह उन्हें कल्पना के आवश्यक प्रयोग और कला के विनियोजन से इस प्रकार प्रस्तुत करे कि वे अपने युग और परिवेश के अनुरूप हों। उनका अस्तित्व भले ही इतिहास में न हो, किन्तु ऐतिहासिक संभाव्यता की दृष्टि से वे सर्वथा ग्राह्य हों, इतिहास के न होने पर भी, अपनी चारित्रिक अभिव्यक्ति से वे सम्बद्धकाल और परिवेश के प्रतीत हों। कल्पनाश्रित पात्रों में ऐतिहासिक संभाव्यता की सृष्टि ही लेखक के चरित्र-चित्रण की सफलता की कसौटी है।

पूर्ववर्ती अध्याय में हम ऐतिहासिक उपन्यासों में प्राप्य पात्रों के अध्ययन के लिये एक वर्गीकरण प्रस्तुत कर आये हैं। अतः हिन्दी और गुजराती के वातावरण प्रधान उपन्यासों के पात्रों का अध्ययन करने के लिये उसी का आधार ग्रहण करना उपयुक्त होगा।

शास्ता वर्ग :

प्रस्तुत वर्ग के उपन्यासों में अधिकांशतः हिन्दू शासक ही

दृष्टिगत होते हैं और मुस्लिम और शक शासकों के केवल एक एक प्रतिनिधि ही। हिन्दू शासकों में भी गणराज्य के शासकों की अपनी विशेषताएं हैं। राज्य तंत्र-प्रधान राज्यों के शासकों में पूर्व निर्दिष्टानुसार, स्वयतताभिमान, निरंकुशता, न्यायपरायणता, प्रजापालन, दुष्ट दलन के लिये तत्परता, प्रदेश की रक्षार्थ, युद्धपरता, और विलासिता आदि विशेषताएं दृष्टिगत होती हैं। गणराज्य के शासकों में पारस्परिक स्वातंत्र्य के लिए आदर की भावना, नियमबद्धता, नारी-स्वातंत्र्य एवं विलासिता का अभाव उनकी विभेदक विशेषताएं हैं। इनमें स्वायतता का मिथ्याभिमान, निरंकुशता और राजाओं की-सी विलासिता क भी नहीं होती।

पूर्ववर्ती अध्याय की भांति इस अध्याय में भी हिन्दू शासकों की, सम्राट्, राजा, और युवराज-सामंत आदि तीन कोटियां दिखाई देती हैं। प्रस्तुत वर्ग के उपन्यासों में मगध सम्राट् के रूप में केवल सम्राट् अग्निमित्र (दीप निर्वाण) आते हैं, जिनकी राज्यलिप्सा और कूटनीतिज्ञता एक ओर उन्हें महा-क्षत्रप शक मैनेन्द्र से मैत्री स्थापित करने के लिये प्रेरित करती है, तो दूसरी ओर मैनेन्द्र के आक्रमण का सामना करने के लिये गणाधीशों की सभा में ऐक्य स्थापित करने की बात के अस्वीकार किये जाने पर उनसे वठ, ब्राह्मणक और मालव, तीनों गणों पर विघातक आक्रमण करवा देती है। सम्राट् अग्निमित्र का यह चरित्र राज्यों की कुटिल कूटनीतिज्ञता का चित्र प्रस्तुत करता है।

राजा की कोटि में मगधराज बिम्बसार (आम्रपाली) राजा नायकसिंह और देवीसिंह (विराटा की पद्मिनी) अयोध्या के राजा मुरहारी विक्रम (बहती रेता) अवंतीराज सातवाहन और अशोकवल्ल (चारु चन्द्र लेख) और झांसी की रानी लक्ष्मीबाई (भारेलो अग्नि) झांसी की रानी लक्ष्मीबाई का भारेलो अग्नि एक सेनानी के रूप में प्रासंगिक उल्लेख मात्र ही है। उसका विहार के आचार्य रुद्रदत्त के आश्रम में उन्हें विप्लव का नेतृत्व ग्रहण करने के

निवेदन के लिये आना सर्वथा कल्पनाश्रित एवं अनैतिहासिक है । सातवाहन के अतिरिक्त, शेष नृपति वर्ग में पूर्वोक्त शासकीय वृत्तियां विद्यमान हैं । अवंती राज सातवाहन इनमें एक अपवाद है । रानी चन्द्र लेखा को राजधानी में लाने पर जैसे ही तुर्क सेना के आक्रमण के समाचार आते हैं, तो वह प्रजा में दुर्भेद्य एकता स्थापित करने के लिये एवं उसकी-रक्षा के लिये अथक प्रयत्न करता है । अशोक चल्ल से सैन्य सहायता प्राप्त कर वह आक्रमक युद्ध से शत्रु की समाप्ति की योजना करता है, किन्तु अशोक चल्ल की कायरता से वह अपने लक्ष्य में सफल नहीं हो पाता । विलासी राजाओं की तुलना में प्रजा में वास्तविक राज्य की भावनावाले सातवाहन के विचार और कार्य उसे गरिमा प्रदान करते हैं ।

अजातशत्रु (आम्रपाली) और कुंवर सिंह (विराटा की पद्मिनी) युवराज और राजकुमार कोटि के पात्र हैं । प्रथम अपनी उग्रता और अदम्य महत्वाकांक्षा से सत्ता-प्राप्ति में सफल रहता है, किन्तु द्वितीय सत्वहीन, दासी-पुत्र होने से एवं सामन्ती प्रथा के कारण अपने स्वत्व से वंचित हो सामंती प्रथा की बलि वेदी पर अपने प्राणों की आहुति दे देता है ।

इनके पश्चात् वैशाली, कठ, ब्राह्मणक, और मालव जैसे गणराज्यों के गणपति आते हैं । इनमें वैशाली के गणपति देवकर्मी, उपगणपति लक्ष्मीकांत (महती रेखा) कठ गण के अध्यक्ष आसंग, ब्राह्मणक के अग्रणी आत्रेय, एवं मालव के आचार्य महाकश्यप (दीप निर्वाण) का समावेश होता है । उपगणपति लक्ष्मीकांत को छोडकर शेष सभी गणपतियों में उपर्युक्त गण-राज्य के शासकों सी विशेषताएं जीवन में क्रियान्वित होती दिखाई देती हैं । उपगणपति लक्ष्मीकांत अपनी शासकीय अयोग्यता, धार्मिक द्वेष, और निजी स्वार्थों के कारण अपने वैश्य और शूद्रों के समुदाय की सहायता से वैशाली के

ब्राह्मणों और क्षत्रियों की सम्पत्ति को नष्ट करवा कर वैशाली का विध्वंस करा देता है ।

मुसलमान शासकों में केवल कलापी का सूबेदार अलिमर्दान (विराटा की पद्मिनी) आता है, जो पूर्ववर्ती अध्याय में प्रस्तुत मुस्लिम शासकों की विशेषताओं के अनुसार अपूर्व सुन्दरी कुमुद की प्राप्ति के लिये पालर और विराटा में युद्ध करता है और उसके बेतावा में समाधि ले लेने पर कूटनीतिकता से देवीसिंह के साथ संधि कर अपनी राह लेता है ।

मैनेन्द्र (दीप निर्माण) बर्बरक शक जाति का महाक्षत्रप, सिकन्दर की भाँति विपुल सैन्य-शक्ति के साथ अन्य देशों पर विजय के लिये उन्मत्त और नृशंस, किन्तु अन्य शकों की अपेक्षा तक्षशिला के आचार्य ऐल की शिक्षा से अभिषिंचित और संस्कारों से युक्त, है, जो तक्षशिला-मोन में स्वर्ण रत्नादि के परोसने पर जीवंत हो जाते हैं । परिणामतः वह तक्षशिला को अपना सीमान्त प्रदेश मान अपने शकों में संस्कार-सिंचन के लिये आर्य शीलमद और भारतीय संस्कार मूर्ति, ऐल शिष्या कृष्णा को जीवन-संगिनी के रूप में ग्रहण कर लौट जाता है ।

मंत्री वर्ग :

महामात्य वर्षकार मंत्री गोपाल (आम्रपाली) भानुमित्र और रिपुदमन (बहती रेता) विद्याधर भद्र (चारुचन्द्र लेख) इस वर्ग में आते हैं । इनकी विशेषताएं पूर्ववर्ती अध्याय में विवेचित इस कोटि के पात्रों की भाँति, राज्य के शासन का संचालन और राज्य का आंतरिक और बाह्य शक्तियों से संरक्षण, तथा उसकी श्री और सरस्वती की वृद्धि आदि हैं । मंत्री वर्ग-पात्रों में से महामात्य रिपुदमन को छोडकर शेष में ये विशेषताएं सामान्य रूप में

प्राप्य हैं। फिर भी महामात्य वर्षकार और भानुमित्र अपने राज्य के शासन और संरक्षण से ही संतुष्ट नहीं रहते, अपितु अपने राज्यों को साम्राज्य बनाने में प्रयत्नशील दृष्टिगत होते हैं। इनमें भी भानुमित्र वैशाली को अवध में विलय कर अवध साम्राज्य का महामात्य बनने में सफल रहता है। रिपुदमन इस वर्ग का हेय पात्र है, जो राजा की अनुपस्थिति में कोष का गबन कर वैश्यों और शूद्र युवकों के संगठन से राज्य परिवर्तन कर स्वयं राजा बनने का षड्यंत्र करता है। विद्याधार मद्र तुरुष्क-सेना के आक्रमण के समय प्रजा में अपनी आत्म-रक्षा के लिये अटूट आत्म-विश्वास उत्पन्न करने के लिये उसे उद्बुद्ध करता है और विंध्याटवी के प्रदेश में ग्रामीण सेना, अटवी-सेना और योगियों की सेना का संगठन करता है।

सैन्य वर्ग :

इस वर्ग के उपन्यासों में भी सेनापति, सैनिक अधिकारी और सैनिक कोटि के पात्र हैं। महासेनापति सुनीध (आम्रपाली) सेनापति वसुमित्र और ब्राह्मणक सेनापति आनंद (दीपनिर्वाण) सेनापति की कोटि में आते हैं। सेनापति की पूर्व-वर्ती निर्दिष्ट अध्याय में निर्दिष्ट विशेषताएं इनमें भी दृष्टि गत होती हैं। उनमें भी महासेनापति सुनीध, " महाशिला कंटक" और " रथमूशल " जैसे अपने युग के लिये अभिनव सामरिक शस्त्रों का आविष्कार करता है। सेनापति वसुमित्र गणराज्यों पर अनैतिक रूप से विघातक आक्रमण करता है। ~~ब्राह्म~~ ब्राह्मणक सेनापति आनन्द अंत में मगध सम्राट् को कैद कर उन्हें वाहीक प्रदेश से हटाने में समर्थ होता है। अंतिम दोनों सेनापति राज्यतंत्र और गणतंत्र की शोषक और संरक्षक नीति का प्रतिनिधित्व करते हैं।

तात्या टोपे, गौतम, मंगल पांडे, अजीज सैयद उल्ला और

महावीर १८५७ के विप्लवकारी सेनानी हैं, जो अन्याय पुष्ट ब्रिटिश शासन के उन्मूलन के लिए अपने जीवन की बलि चढा देते हैं ।

कैप्टन पीटर्स, और नेक्शन अंग्रेज सैनिक अधिकारी हैं । पीटर्स में प्रामाणिक और साहसी अंग्रेज अधिकारी के गुण विद्यमान हैं, जब कि नेक्शन, इससे सर्वथा विपरीत भारतीय सिपाहियों के प्रति कुटिल, घृणापूर्ण और अपमान जनक व्यवहार करने वाले अंग्रेजों का प्रतिनिधित्व करता है । हेनरी एक राजनीतिक चर है ।

आचार्य वर्ग :

पूर्ववर्ती अध्याय के आचार्यों की भांति, इस वर्ग के पात्र भी प्रायः अपने ज्ञान और नैतिक बल के आधार पर राजा और प्रजा को अपने कर्तव्य तथा नीति-नियम के अनुसार आचरण करने का निर्देश करते हैं । इस वर्ग में शास्त्रनिधि आचार्य ऐल (दीप निर्वाण) आचार्य तक्षकदेव (आम्रपाली) और आचार्य रुद्रदत्त (मारेलो अग्नि) का समावेश होता है, जो सामान्यतः अपने उपर्युक्त कर्तव्यों का निर्वाह करते हैं । इनमें से तक्षशिला के आचार्य ऐल ने नृशंस और बर्बर शकों को भोजन के स्थान पर स्वर्ण रत्नादि परोस कर एक ओर जहां भारत को शकों के आक्रमण के महा विध्वंस से बचाया, वहां बर्बर शकों के प्रसुप्त मानवीय संस्कारों को भी जागृत किया । उनके आचार्यत्व का आदर्श, वास्तव में समस्त मानवता के लिये एक अनुपम विचार-निधि है । सत्य और अहिंसा के समर्थक आचार्य रुद्रदत्त लेखक की युगीन-चेतना का कृति के युग में निरूपण है जो ऐतिहासिकता की दृष्टि से एक दोष माना जा सकता है । लेखक उन्हें न्याय और वेदान्त के आचार्य के रूप में चित्रित कर एवं साठ वर्ष तक सशस्त्र क्रांति के संचालक रहने पर और उसकी विफलता देख कर अहिंसा की ओर मुड़ने की संभाव्यता के आधार पर ग्राह्य बताना चाहता है । किन्तु उनके दोनों

पक्षों का समग्रतया विश्लेषण करने पर उनका चरित्र संभाव्यता से दूर रह जाता है।

बौद्ध स्थविर और पादरी भी आचार्य वर्ग में आते है। इनमें महाप्रभु कल्याण (बहती रेती) और शील भद्र (दीप निर्वाण) उल्लेखनीय हैं। महाप्रभु कल्याण बौद्ध भिक्षु होने पर भी राजनीतिक प्रपंच में गिर कर लक्ष्य भ्रष्ट हो जाता है। आर्य शील भद्र बुद्ध के प्रशस्त मार्ग को अपने आचरण से मानव कल्याण का आधार बतला कर शकों में मानवीय संस्कारों के अभिसिंचन के लिये मैत्रेन्द्र के साथ हरौवती की यात्रा के लिये प्रस्थान कर देते हैं।

इतर अधिकारी वर्ग :

राजा, मंत्री, और सैन्य अधिकारियों के अतिरिक्त इतर राजकीय अधिकारी वर्ग का विवेचन भी यहाँ अपेक्षित है। प्रस्तुत वर्ग के उपन्यासों में नगरश्रेष्ठी धनपाल और उसका पुत्र सुदत्त (दीप निर्वाण) इस वर्ग में आते हैं। नगर श्रेष्ठी धनपाल नन्दिग्राम का कंटक शोधक है, उसकी कर्तव्य परायणता और गण के प्रति विश्वास पात्रता अपने अपराधी पुत्र सुदत्त को गण के न्यायाधीश के सम्मुख प्रकट करने में एवं उसके द्रोहीवन मगध सेना को आमंत्रित कर लाने पर स्वयं उसका प्राणान्त करने में दृष्टिगत होती है। सुदत्त एक शिल्पी है, किन्तु बड़ा कुटिल और असहिष्णु। जीवन में अपेक्षित सुचरिता की प्राप्ति में उसकी विफलता उसे गणद्रोह कर, मगध सेना द्वारा नन्दिग्राम को विनाश की ओर ले जाने को बाध्य करती है। प्राणान्त के समय उसके चरित्र का उदात्तीकरण किया गया है, मरने से पूर्व वह नंदिग्राम के उद्धार का मार्ग बता जाता है, किन्तु खंडित प्रतिमा पूजार्ह नहीं होती।

जन साधारण वर्ग :

पूर्ववर्ती अध्याय में निर्दिष्ट किये अनुसार इस वर्ग में ऐसे

पात्र आते हैं, जिनकी सृष्टि लेखक जिनी लक्ष्य की सिद्धि के लिये करता है। ये पात्र अधिकांशतः जीवन में अपने सिद्धान्त और आदर्शों के लिये तथा अपने कर्तव्य और प्रेम के लिये समर्पित होते हैं। बोधा प्रधान (चारुचंद्र लेख), त्र्यम्बक (मारेलो अग्नि), " नरपति सिंह, तथा सबदल सिंह (विराटा की पद्मिनी) आदि इस कोटि के पात्र हैं। बोधा प्रधान विद्याधर भट्ट का कायस्थ शिष्य, धीर, गंभीर एवं असाधारण रूप से कूटनीतिज्ञ, अपने बुद्धि-कौशल और साहस से सभी समस्याओं पर विजय पानेवाला, वह एक निगूढ हृदय और अनन्य रूप से कर्तव्य परायण है। त्र्यम्बक आचार्य रुद्रदत्त का प्रिय शिष्य और व्यायाम वीर है। आचार्य और गौतम के निधन पर कल्याणी को सती होने से विरत कर आचार्य के सिद्धान्तों के प्रचार में लग जाता है। नरपतिसिंह और सबलसिंह सामंती प्रथा और अपने अंध-विश्वासी होने के कारण दुरात्मा हो जाते हैं।

नाथ पंथी योगी :

जनसाधारण पात्रों के अतिरिक्त सिद्धों नाथपंथियों और योगियों को भी " नाथपंथी योगी " जैसे एक नये वर्ग में ग्रहण किया जाना चाहिए। ये सिद्धियों के प्रति परिवर्द्धित जनता के व्यामोह को भंग कर उसे अपनी आत्म-रक्षा के लिये कटि बद्ध होने को उद्बोधन करते हैं।

पादरी जॉनसन (गुवान सेन) अंग्रेजों के कूटनीतिक स्वार्थों की पूर्ति के लिये नियुक्त किया गया धर्म प्रचारक है, जो अपने विचारों में स्वतंत्र चेतना होने के कारण अन्य मिशनरियों की अपेक्षा अपना एक स्वतंत्र और प्रामाणिक व्यक्तित्व रखता है।

स्त्री पात्र :

प्रस्तुत वर्ग के स्त्री पात्र भी पूर्ववर्ती अध्याय में दिये वर्गीकरण

की भाँति राजमाता, राजरानी, तथा राजकुमारी, सेविका, नर्तकी, और सामान्या आदि रूपों में प्राप्त होते हैं। इनके अतिरिक्त भक्ति तथा योग-साधना द्वारा आत्म-कल्याण में लीन भक्ति और योग की साधिका साध्वी, एवं भिक्षुणी के रूप में भी कुछ एक स्त्रीपात्र यहाँ दृष्टिगत होते हैं। भगवती विष्णुप्रिया और नाटीमाता साध्वी कोटि के स्त्री पात्र हैं, जो अपनी भक्ति के सौम्य प्रभाव से सिद्धियों से दूषित स्वास्थ्यवाली चंद्रलेखा के पुनः स्वास्थ्य-प्राप्ति का निमित्त बनती हैं। आर्या सुव्रता एक प्रेम परायण साध्वी है, जो पूर्वाश्रम के जीवनसाथी देवहुती और बाद के बौद्ध भिक्षु आचार्य शीलभद्र की रुग्णावस्था में (पुत्र आनंद को नाना आत्रेय के पास छोड कर) उनकी शुश्रूषा के लिये भिक्षुणी का रूप स्वीकार करती है।

अयोध्या की राजमाता, अवंत-महाराज मुरहारी विक्रम के रानी पद्मावती के वश हो राज्य को क्षति पहुंचाने की अवस्था में राज्य-सत्ता अपने हाथ में ग्रहण कर राज्य और राजा का संरक्षण करके अपने पद के उपयुक्त एक महत्त्वपूर्ण कार्य करती है।

रानी चंद्रलेखा, मल्लिका और पद्मावती राजरानी की कोटि के पात्र हैं। इनमें से केवल रानी चन्द्रलेखा रानी का एक आदर्श रूप हमारे सम्मुख प्रस्तुत करती है। दुर्ग सेना के आक्रमण पर वह प्रजा को एक हो शत्रु का सामना करने के लिये उद्बुद्ध करती है। प्रजा के इस संकट का निवारण करने के लिये ही वह नागनाथ के कोटिवेधी रस में सहायक होती है। महारानी मल्लिका केवल अधिकार को जीवन की सफलता मानने के कारण विनाश को प्राप्त होने वालों की स्थिति का भयंकर उदाहरण है। वेश्या-पुत्री पद्मावती बौद्ध धर्मानुयायियों के छल से सेठि-पुत्री के रूप में महाराज मुरहारी विक्रम की राजमहिषी के पद को प्राप्त कर धार्मिक द्वेष से राज्य का पतन करती है।

विराटा की पद्मिनी कुमुद और गोमती यद्यपि राजकुमारी के पद की अधिकारिणी नहीं, किन्तु अपूर्व सुंदरी (कुमुद) और स्वाभिमानप्रिय राजपूत बालाएं हैं। युगीन सामन्ती प्रकृति के प्रतिनिधियों की विलासिता की वेदी पर उनका जीवन एक आहुति बन कर रह जाता है। उनका आत्म-बलिदान सामंती प्रथा पर एक करारी चोट है।

अपूर्व सुंदरी आम्रपाली वैशाली की जनपद कल्याणी बन एक ओर अपने नारी-मानस की बलि देती है, तो दूसरी ओर वैशाली को मगध के आक्रमण से बचाने के लिये मगधराज से उत्पन्न पुत्र को शैशवावस्था में ही, अपने मातृत्व को कुचल कर मगध सेना में भेज देती है। अपने स्वत्व-त्याग और बलिदान के कारण वह वास्तव में जनपद कल्याणी के पद को सार्थक करती है।

आचार्य रुद्रदत्त की पौत्री कल्याणी, महाकाश्यप की पुत्री सुचरिता, नाटीमाता की मैना (मैनसिंह) तथा ऐल शिष्या कृष्णा सामान्या वर्ग का प्रतिनिधित्व करती हैं। मनसा गौतम का वरण करने लेने वाली आचार्य रुद्रदत्त की पौत्री, कल्याणी रुद्रदत्त और गौतम के १५५७ के विप्लव में हुतात्मा हो जाने पर उनके सिद्धान्तों के प्रसार में जीवन-यापन करती है। आचार्य महाकश्यप की दुहिता सुचरिता एक भावनाशील और कलाविद् बाला है। भावनाशीलता उसे " आनंद"मय बना देती है, किन्तु इससे पूर्व मुग्धभाव और कला-प्रेम के कारण पद्मपाणी की प्रतिमा के उत्तम सर्जन पर सुदत्त को यथेष्ट दान का वचन दे विषम स्थिति को आमंत्रित कर लेती है, जिससे उसे बौद्ध-भिक्षुणी (विहारिका) बनने पर मुक्ति मिलती है। ऐल शिष्या कृष्णा अद्भुत रूप से साहसी, शस्त्रविद्, वाक्पटु और विनोदप्रिय है। इसके साथ ही कठगण की हुतात्मा कन्याओं को जिन्होंने नंदीग्राम के घेरे वाली मगध सेना में आग लगा मालवों के नंदीग्राम से पलायन का मार्ग सुगम किया, भुलाया नहीं जा सकता।

प्रस्तुत अध्याय के उपर्युक्त पात्रों के चरित्र-चित्रण में लेखकों ने

यहाँ भी प्रायः उन्हीं पद्धतियों का प्रयोग किया है, जिनका उल्लेख पूर्ववर्ती अध्याय में किया जा चुका है। इस वर्ग के उपन्यासों में भी लेखक कृति के पात्रों को प्रस्तुत कर पाठकों के मन में जिज्ञासा उत्पन्न करने के उपरांत, उनके शब्द-चित्र, और रेखांकन, प्रस्तुत करते जाते हैं। " चारुचन्द्र लेख " के मैनसिंह (मैना) का शब्दचित्र यहाँ उल्लेखनीय है — " सचमुच यह रूप में साक्षात् कामदेव है और पराक्रम में साक्षात् सिंह। कोमल मुख मंडल पर निश्चय ही अटूट आभा थी। पहनावे में एक नटों का आजानुविलम्बित चोल और सिर पर चक्करदार पगड़ी। छाती ऊंची और चौड़ी थी, जिस पर कसके लोहकवच बंधा हुआ था। कमर में छोटी सी तलवार और पैरों में चमरौधा जूता। "[1] इन पंक्तियों में मैनसिंह की वेषभूषा, सुदृढ शारीरिक गठन, जातीय चपलता, दर्शनीय कमनीयता, एवं आन्तरिक वीरता की सम्यक् अभिव्यक्ति हुई है। इसी प्रकार दीप निर्वाण के आरंभ में सेनानी आनंद का रेखांकन है — " एक दीर्घबाहु, प्रियदर्शी, गंभीर मुख युवक। मुँह पर पर्वत की दृढता और आकाशगामी पुरुषार्थ, आँख में सागर का गांभीर्य तथा स्वास्थ्य और शक्ति द्वारा उत्पन्न आत्म-विश्वास है। "[2] वास्तव में उपर्युक्त शब्दों में एक समर्थ सेनानी उभर आता है। इसके अतिरिक्त इन उपन्यासों में कुमुद, भानुमित्र, चंद्रलेखा, सीदा मौना, गोरक्षनाथ, अजात शत्रु, रुद्रदत्त, गौतम, सुचरिता, कृष्णा, मैनेन्द्र प्रभृति पात्रों के कतिपय सुंदर शब्द-चित्र विद्यमान हैं।

पात्रों के परिचय के उपरांत सम्बन्धित पात्रों पर उनका अपना प्रभाव परिलक्षित होता है। इस वर्ग के उपन्यासों में ऐसे प्रभावात्मक चित्रण बड़े ही रोचक और प्रभावाभिव्यंजक हैं। देवी के रूप में कुमुद को देख कुंवर उसे अपना सर्वस्व समझने लगता है, यह कुमुद के सम्मुख प्रकट किये गये उसके कथन से

१ चारुचंद्र लेख, पृ० १२६

२ दीपनिर्वाण, पृ० ४

स्पष्ट है — " आपकी आज्ञा का पालन करना ही धर्म, कर्तव्य और सर्वस्व है। इन चरणों की कृपा बनी रहे, तो संसार भर की एकत्र सामर्थ्य तुच्छ तृण के समान समझूँ। "[1] यहाँ कुमुद के सौन्दर्य और दैवी रूप का कुंजर पर पड़ा प्रभाव श्रद्धापूर्ण शब्दावली में अभिव्यक्त हुआ है। इसी प्रकार " चारुचन्द्र लेख " में चन्द्र लेखा का रूप वर्णन और उसके प्रभाव का चित्रण दो पृष्ठों तक चलता है।

इस प्रकार पात्रों के आकृति-वर्णन और उनके प्रभावात्मक चित्रण के अतिरिक्त पात्र के विचार, कार्य, और उनकी प्रतिक्रियाओं के द्वारा भी उनकी चारित्रिक विशिष्टताओं का उद्घाटन किया गया है। लेखक के कथन के अतिरिक्त पात्रों के कथोपकथन भी उनके विचारात्मक व्यक्तित्व के अच्छे परिचायक हैं। राजा सात वाहन के चन्द्रलेखा को राजधानी में लाने के बाद तुर्क सेना के आक्रमण के समाचार प्राप्त होने पर विद्याधर भट्ट के निम्नांकित उद्गार उसके व्यक्तित्व का सम्यक् परिचय देते हैं — " शस्त्र-बल से हारना हारना नहीं है। आत्मबल से हारना ही वास्तविक पराजय है। बेटी, सारा का सारा देश विदेशियों से आक्रांत हो जाए, मुझे रंच मात्र भी चिंता नहीं, यदि प्रजा में आत्म-विश्वास बना रहे, अपने गौरवमय इतिहास की प्रेरणा जाग्रत रहे। - - - - - महान संकल्प ही महान फल का जनक है। "[2] वास्तव में यहाँ भी विद्याधर भट्ट के उच्च मनोबल सम्पन्न व्यक्तित्व की सम्यक् प्रतीति होती है। तक्षशिला के आचार्य ऐल शकों को परोसने के लिये, स्वर्ण रत्नादि निकालते हैं, तब आनंद उनसे कहता है — " इतना धन होने पर भी आप विद्यालय क्यों नहीं बनवाते। इसके प्रत्युत्तर में भी ऐल कहते हैं, " विद्यालय अपने घर खड़ा करना चाहता हूँ, धन पर नहीं। "[3] इससे प्राचीन आचार्यों की विद्या के लिये समर्पण शीलता

१ विराटा की पद्मिनी, २१३

२ चारुचंद्र लेख, पृ० १६

३ वही, पृ० २२०

व्यक्त होती है। शास्त्र निधि ऐल इसी समर्पण भावना से तक्ष शिला छोड अन्यत्र जाने का विचार भी नहीं कर सकता। वह कहता है — " पर यहाँ से क्यों हटूं ? सरस्वती, वह किसी राजा की दासी नहीं, और न ही परिणीता जो उसका अनुसरण करे। उसके प्रदेश में जाकर रहें, तभी जो द्रव्यदान करे, ऐसे राजा वागीश्वरी की चरणधूली के भी अधिकारी नहीं हैं। " [1] वस्तुतः सरस्वती राज्यश्री की दासी नहीं है, इस तथ्य की यहाँ सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है। इसी प्रकार गोरखनाथ, भगवती विष्णुप्रिया और सीदी मौला के कथोपकथन में जो विचार व्यक्त हुए हैं, वे नाटकीय शैली द्वारा उनके लोक-कल्याणकारी व्यक्तित्व को उद्घाटित करते हैं।

मनुष्य के विचार ही उसके कार्य-व्यापार का आधार होते हैं। यह एक सर्व स्वीकृत तथ्य है। विश्वाधर मद्र अपने पूर्वोक्त विचारों के अनुसार ही प्रजा में जागृति उत्पन्न कर शत्रु का सामना करने के लिये विंध्याटवी में सैन्य संगठन करता है। गोरखनाथ और अमोघवज्र प्रजा को सिद्धियों के जाल से निकालने के लिये अपनी योग-साधना छोड प्रजा को एक हो शत्रु का सामना करने की प्रेरणा देते हैं। सारस्वत आचार्य ऐल अपने विचारों के अनुसार शकों को रत्न परोसकर उन्हें व्यर्थ के नर-संहार और रक्तपात से वारित करते हैं। आचार्य रुद्रदत्त अपनी अहिंसा के लिये विप्लव कारियों में अपने प्राण न्योछावर कर देते हैं। आचार्य महाकश्यप गण की रक्षार्थ प्रयत्न करते हुए हुतात्मा हो जाते हैं। इस प्रकार प्रस्तुत वर्ग के पात्रों के कार्य उनके चरित्र की विविध दिशाओं को इंगित करते हैं।

वर्णनात्मक शैली की भाँति, पात्रों में स्वाभाविकता और सहजिकता लाने के लिये मनोविश्लेषणात्मक पद्धति एवं नाटकीय पद्धति का

---

1 चारुचंद्र लेख, पृ० १६८

प्रयोग भी आवश्यक है। रानी चन्द्रलेखा को राजधानी में लाने और तुर्क सेना के आक्रमण के समाचार पर सातवाहन के अन्तर्द्वन्द्व का निरूपण देखिये -
" बाहर से दुर्दांत शत्रुओं के आक्रमण की खबर आई है, और भीतर सारी सत्ता द्रवित होकर रानी की ओर ढरक जाना चाहती है। यह क्या विरोध है ? मुझे तत्काल बाहर जाना चाहिये और अपनी सारी शक्ति प्रजा वर्ग में संचारित करके प्रतिरोध की भावना उत्पन्न करनी चाहिए। और मैं अपनी सम्पूर्ण सत्ता को रानी में विलीन कर रहा हूं। यह विरोध नहीं तो क्या है ? " [1]
प्रस्तुत कथन में सद्यः विवाहिता रानी के प्रति मोह और प्रजा के प्रति कर्तव्य-भावना के कारण उसके मन में उत्पन्न अन्तर्द्वन्द्व का सुंदर चित्रण है। " आम्रपाली " में आम्रपाली के वैशाली गण के नियम के अनुसार जनपद कल्याणी बनने के प्रसंग पर एवं वैशाली पर मगध के आक्रमण का निवारण करने के लिये शिशु अवस्था में ही बिम्बसार से उत्पन्न पुत्र को मगध भेजने के समय उसके मानसिक द्वन्द्व का तथा " दीप निर्वाण " में आनंद के प्रति आकर्षित होने पर शिल्पी सुदत्त को इससे पूर्व यथेष्ट दान के वचन के कारण सुचरिता के अन्तर द्वन्द्व का निरूपण बड़ा ही प्रभावशाली है। इसी प्रकार प्रस्तुत उपन्यास के अन्त में गण-द्रोह के कारण सुदत्त की मनःस्थिति का विश्लेषण भी अविस्मरणीय है।

इसके अतिरिक्त नाटकीय शैली द्वारा भी पात्रों का चारित्रिक उन्मेष बड़ा प्रभावशाली रहा है। " चारुचन्द्र लेख " में मेनसिंह शत्रुओं के हमले में से रानी को निकाल लाता है, उसके शौर्य पर मुग्ध हो सीदी मौला जैसा अशत्रु-मित्र भी उसकी प्रशंसा कर उठता है, वह कहता है -- " सीदी मौला ने आज तक किसी के पैर नहीं छुए हैं ; पर इस युवक के पैर छूने की इच्छा होती है। कैसा वीर है, कैसा चतुर और कैसा भोला, इतना बड़ा काम किसी

१ चारुचंद्र लेख, पृ० ९१

और ने किया होता, तो घमंड से फूल उठता, पर वह तो और भी संकुचित लगता है । " यहाँ एक निर्लिप्त व्यक्ति के, मैनसिंह के उक्त पुरुषार्थ के सम्बन्ध में व्यक्त किये उद्गार निश्चय ही उसके साहस, शौर्य और विनय शीलता के गुणों को अभिव्यंजित करते हैं । " आम्रपाली " में वर्षकार अजात शत्रु की उपस्थिति में महास्वप्न की सिद्धि के लिये तक्षक देव से प्रश्न करता है — " स्वप्न को साकार करने वाले को क्या करना चाहिये ? " " एक आसन, एक शांति, " तक्षक देव ने कहा, " वर्षों की उपासना, वर्षों की धीरज । " यहाँ इस संक्षिप्त प्रश्नोत्तर से एक ओर ~~वर्षकार~~ वर्षकार की नीतिमत्ता, तक्षक देव की परिपक्व अनुभव शीलता की अभिव्यक्ति होती है, वहीं जिस पात्र की उपस्थिति में यह कथन कहा गया है, उसके चरित्र में शांति और स्थिरता का अभाव भी ध्वनित हो जाता है । इस प्रकार चारित्रिक विकास में नाटकीय शैली का उपयुक्त प्रयोग दृष्टिगोचर होता है ।

इस प्रकार प्रस्तुत वर्ग के उपन्यासकारों ने ऐतिहासिक परिवेश की सीमाओं में रह कर (यथाशक्य) ऐसी सजीव और प्रभावशाली पात्र-सृष्टि प्रस्तुत की है कि पाठक उनके साथ संवेदनशीलता का अनुभव करता हुआ उनके साथ बढ़ता जाता है और उपन्यास की समाप्ति के बाद भी उनकी स्मृति उसके मानस पटल पर बनी रहती है ।

प्रस्तुत वर्ग के पात्रों के अध्ययन करने पर चरित्र-चित्रण की कुछ एक त्रुटियाँ भी देखने में आई हैं । " विराटा की पद्मिनी " में कुंवर सिंह का चरित्र सर्वथा, निष्क्रिय, स्त्रैण और प्रभावहीन लगता है । " बहती रेता " में महाप्रभु के चित्रण में उसे राजनीतिक प्रपंच तक घसीटना सुसंगत हो सकता है, किन्तु विनोदमवन में उसका वासना का विषय बन जाना, उसका भिक्षुत्व और कूटनीतिज्ञत्व से भी नीचे गिर जाना, प्रतीति कर नहीं लगता । आचार्य रुद्रदत्त का चरित्र भी संभाव्यता से दूर होने के कारण विश्वसनीय नहीं कहा जा

सकता । किन्तु इस प्रकार के दोष अल्प संख्या में हैं और उससे उपन्यास-शिल्प पर कोई दुष्प्रभाव नहीं पड़ता ।

अंत में, इस वर्ग के उपन्यासों की पात्र-सृष्टि, महामात्य भानुमित्र, सातवाहन, विद्याधर भट्ट, मेनसिंह, बोधा प्रधान, रुद्रदत्त, गौतम, मंगल पांडे, गणनायक सिंह सेनापति, वर्षकार, महाकश्यप, आनंद, और स्त्रियों में कुमुद, चंद्रलेखा, कल्याणी, आम्रपाली, सुचरिता और कृष्णा के चरित्र बड़े ही प्रभावशाली हैं ।

निष्कर्ष :

प्रस्तुत अध्याय के पात्रों के चरित्र-चित्रण के आधार पर यह तथ्य प्रकाश में आता है कि हिन्दी के ऐतिहासिक उपन्यासों के पात्र मानव-जीवन का प्रायः समग्र चित्र प्रस्तुत करते हैं । " विराटा की पद्मिनी " के पात्र अपने समय के धर्मांधतायुक्त सामाजिक जीवन, सामंती विलासिता, राजनीतिक छल-प्रपंच को प्रकट करते हैं । " बहती रेता " और " चारुचंद्र लेख " में मानव समाज अपने व्यापक रूप में प्रतिबिम्बित हुआ है । " बहती रेता " में तक्षशिला शैक्षणिक जीवन को, मुरहारी विक्रम और चन्द्रचूड राजकीय वर्ग को, मल्लिका, उसकी माता, उपगणपति लक्ष्मीकांत, श्रेष्ठि सुनंद सेठ भूधर वैश्य वर्ग को, ब्राह्मण कुल के आचार्य वैवस्वत पं० मैत्रेन्द, देवशर्मा, भानुमित्र, आचार्य पुरोहित, गणपति, और मंत्री वर्ग को, महाप्रभु कल्याण और रिपुदमन षड्यंत्रकारी बौद्ध-भिक्षु और अमात्य को, चम्पा-करणदेव तथा नीलमणि और पद्मनाभ गुप्तचर वर्ग को एवं बौद्धधर्म की बलपूर्वक दीक्षा और राजनीतिक षड्यंत्र के लिये प्रयुक्त निम्नजाति के पात्र शूद्रवर्ग को, मृदुला और पारस नर्तकी-वृन्द को प्रस्तुत करते हैं, तो " चारुचंद्र लेख " में राजा और मंत्री वर्ग के साथ नाथपंथी योगी और फकीर भी हैं, आक्रमणकारी तुर्कों की टक्कर के लिए संगठित ग्राम सेना और अटवी सेना के रूप में ग्राम जीवन और आरण्यक लोक-जीवन, मेनसिंह, नाटीमाता

और मल्हण द्वारा नट और चारण जैसी सामान्य जातियों का जीवन और उनके अंध विश्वास ; भगवती विष्णु प्रिया और अक्षोभ्य भैरव द्वारा वैष्णवी उपासना और शाक्त उपासना, शाह सुलतान द्वारा तुर्कजीवन के सत् असत् पक्ष, अशोकचल्ल द्वारा स्वार्थी और कायर जीवन के चित्रों द्वारा मानव-जीवन व्यापक स्वरूप में अभिव्यक्त हुआ है ।

गुजराती के ऐतिहासिक उपन्यासों में से " दीपनिर्वाण " में अपने बौद्धकालीन गणों के सामाजिक, शैक्षणिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक जीवन का एक व्यापक रूप अवश्य दृष्टि गोचर होता है, किन्तु शेष में मानव जीवन का अंश विशेष ही चित्रित है । " भारेलो अग्नि " में असंतुष्ट विप्लवकारी वर्ग, अंग्रेज सैनिक अधिकारी वर्ग और अहिंसा के समर्थक आचार्य रुद्र दत्त आते हैं । " आम्रपाली " के पात्र वैशाली और मगध की कूटनीति को प्रकट करते हैं । अतः निष्कर्षतः गुजराती के ये उपन्यास केवल राजकीय वर्ग के तात्कालिक जीवन तथा तज्जन्य वातावरण तक ही सीमित कहे जा सकते हैं ।

कथोपकथन :

पूर्ववर्ती अध्याय की भाँति प्रस्तुत अध्याय में भी कथोपकथन का यही अपेक्षित, सरल, सरस और प्रभावशाली रूप दृष्टिगोचर होता है । पात्र, परिस्थिति और विषय-वस्तु के अनुरूप इसके स्वरूप और इसकी भाषा में भी यथावश्यक परिवर्तन दिखाई देता है, जो कथावस्तु को जीवन के विविध भावों और रंगों से रंजित कर उसे अपूर्व रोचकता और मनोरमता प्रदान करता है । स्वरूप के साथ ही कथावस्तु को गतिशील बनाने में एवं पात्रों के चारित्रिक उन्मेष में और उनके ज्ञान-विज्ञान तथा दर्शन की अभिव्यक्ति में इसकी सम्यक् उपयोगिता दृष्टिगत होती है जो निम्नांकित विवेचन से स्पष्ट है ।

कथोपकथन के सहज स्वरूप के लिये प्रस्तुत वर्ग के उपन्यासों में

से कतिपय उदाहरण यहाँ द्रष्टव्य हैं। " चारु चन्द्र लेख " में रानी चंद्रलेखा और मैना का, "उसके द्वारा राजा की सेवा सम्बन्धी " कथोपकथन नारी मानस का एक मनोरम चित्र प्रस्तुत करता है। रानी मैना से राजा की सेवाओं का विवरण जानने के बाद एक झटके से चिल्लाकर कहती है - मैना तू चोर है। तू चंद्रलेखा का धन चुराने गई थी। "

" बिल्कुल नहीं, मैं तो अपनी दीदी का धन उसके पास ले आई हूं।
" पास ले आई है ? "
" एक हाथ में। " [1]

यहाँ रानी के प्रति मैना के निर्मल सख्य भाव की बड़ी ही सुंदर और रोचक अभिव्यक्ति दिखाई देती है। " दीप निर्वाण " में सुचरिता और आनंद के प्रथम कथोपकथन " तुम ब्राह्मणक बहुत ही विनम्र लगते हो " [2] में व्यक्त आनंद की विनयशीलता एक ओर सुचरिता को मुग्ध करती है, तो दूसरी ओर पाठकों को उनके प्रति जिज्ञासाशील भी। इस प्रकार प्रस्तुत वर्ग के उपन्यासों में ~~विभिन्न~~ विभिन्न पात्रों द्वारा विविध कोटि के विषयों पर सुन्दर और सरस कथोपकथनों की सृष्टि जीवन के विविध भावों और पक्षों को प्रस्तुत कर जीवन की समग्रता से परिचित कराती है।

कथावस्तु को सहज गतिशीलता प्रदान करने के लिये भी इसका व्यापक प्रयोग दृष्टिगत होता है। " बहती रेता " के आरम्भ में वैवस्वत मुनि के सम्मुख मुरहारी विक्रम और मल्लिका का कथोपकथन उनके विवाह द्वारा कथावस्तु के सूत्रों को अयोध्या और वैशाली की दिशाओं में ले जाता है। भानुमित्र और देवधर्मा का कथोपकथन भानुमित्र को अयोध्या ले आता है, जहाँ वह

१ चारु चंद्र लेख, पृ० १५४
२ दीप निर्वाण, पृ० १

महामात्य बन जाता है। अन्त में इन्हीं का कथोपकथन वैशाली के अयोध्या में विलय से साम्राज्य संस्थापन में परिणत होता है। " चारुचंद्र लेख " में सातवाहन और भोगी का कथोपकथन चन्द्र लेखा -प्राप्ति की और कथावस्तु को ले जाता है, तो राजधानी में विद्याधर मधु का रानी और सातवाहन को उद्बोधन उन्हें महलों से प्रजा के मध्य ले जाता है। " भारेलो अग्नि " में मंगल पांडे और नेवशन का वार्तालाप उन्हें अपने कीमिया युद्ध में यशस्वी कार्य के लिये पुरस्कार की अपेक्षा फांसी की सजा दिलवाता है, जहाज में सैयद उल्ला का गौतम और मंगल से संवाद उन्हें समुद्र में कूद कर भाग निकलने की दिशा इंगित करता है। चर्बी सम्बन्धी अंग्रेज अफसर और मंगल पांडे के साथ का कथोपकथन मंगल पांडे को शहीद होने के लिये बाध्य करता है, तो लक्ष्मीबाई का मंगल पांडे के शहीद होने और गौतम के कैद होने का आचार्य रुद्रदत्त के साथ हुआ वार्तालाप, आचार्य, कल्याणी, और त्र्यम्बक, को विहार से बाहर ले आता है। इसी प्रकार " दीप निर्वाण " में गणाधीशों की सभा में मगध कुमार वसु मित्र और महाकाश्यप के कथोपकथन मगध सम्राट की मैत्री के प्रस्ताव की अस्वीकृति वाहीक संघ पर मगध-सेना के आक्रमण का कारण बनती है, तो दूसरी ओर तक्षशिला में भोज के समय ऐल और रत्नाकर के साथ में असमर्थ शकों का संक्षिप्त संवाद महाक्षत्रप मैनेन्द्र के आक्रमण की दिशा बदल देता है। इस प्रकार कथावस्तु को गतिशीलता प्रदान करने में कथोपकथन का प्रयोग बहुत ही सफल रहा है।

इसके साथ पात्रों के चारित्रिक उन्मेष में कथोपकथन की उपयोगिता के सम्बन्ध में हम चरित्र-चित्रण के विवेचन के अन्तर्गत इसकी क्रियाशीलता का परिचय दे आये हैं। अतः अनावश्यक विस्तार का निवारण करने के लिये, उसके अन्य पक्ष पर विचार किया जायेगा।

कथोपकथन के उपर्युक्त गुणों का अवलोकन करने के बाद, उसकी

त्रुटियों को भी देख लेना वांछनीय होगा । " आम्रपाली " में जहाँ महामात्य वर्षकार, महा सेनापति सुनीध और सिंह सेनापति वार्तालाप में लगते हैं, वहाँ कथोपकथन का विस्तार कथावस्तु में गत्यवरोध उत्पन्न कर नीरसता उभारता है । चारनचंद्र लेख में भी विद्याधर मद्र आदि के उद्बोधन और कथोपकथन की यही स्थिति है । ऐसे स्थलों पर पाठक अधीर हो पृष्ठ उलटने लगता है । संतोष इसी बात का है, कि ऐसे स्थल अधिक नहीं हैं ।[1] इनके अतिरिक्त कथोपकथन का योगदान अपने लक्ष्य में उत्कर्ष विधायक रहा है ।

निष्कर्ष :

उपर्युक्त अध्ययन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि हिन्दी और गुजराती के ऐतिहासिक उपन्यासों में कथोपकथन अपने स्वरूप और उपयोगिता की दृष्टि से एक रूप दिखाई देता है । कहीं कहीं उसकी दीर्घता दोनों में ही विद्यमान है, फिर भी " बहती रेता " और " चारन चंद्रलेख " में सांस्कृतिक विषयों से सम्बन्धित कथोपकथन एवं आम्रपाली और दीप निर्वाण में राजनीतिक विषयों सम्बन्धी कथोपकथन हिन्दी और गुजराती के उपन्यासों में क्रमशः अपना वैशिष्ट्य व्यक्त करते हैं । वे गंभीर विषयों से सम्बद्ध होते हुए भी सरस और प्रभावशाली हैं ।

वातावरण :

वातावरण-प्रधान ऐतिहासिक उपन्यासों में युगीन वातावरण की जीवंत सृष्टि तो इनका मुख्य लक्ष्य होता ही है, किन्तु इसके साथ ही लेखक अपने सिद्धान्तगत उद्देश्य एवं कलागत उद्देश्य की दृष्टि से भी वातावरण का यथावश्यक उपयोग भी करता है । कृति में जहाँ सिद्धान्तगत उद्देश्य मुख्य होता

1 मारेलो अग्नि, पृ० २७

है, वहाँ वह अपने सिद्धान्त के अनुरूप ही कथावस्तु, पात्र, और वातावरण की सृष्टि करता है। जहाँ सिद्धान्तगत उद्देश्य के प्रतिपादन का आग्रह नहीं होता, वहाँ वह वातावरण का उपयोग केवल कलागत उद्देश्य को लक्ष्य में रख कर ही करता है। इस दृष्टि से वह वातावरण के द्वारा, कथावस्तु की रमणीयता, पात्रों के चरित्र का उद्घाटन एवं ऐतिहासिकता की विश्वसनीयता उत्पन्न करता चलता है।

" बहती रेता " और " मारेलो अग्नि " में सिद्धान्तगत उद्देश्य को लेकर वातावरण का उपयोग किया गया है। " बहती रेता " में लेखक बौद्ध धर्म और आर्यमत के संघर्ष के कारण गणों के विध्वंस का निरूपण करना चाहता है। इसी लक्ष्य के अनुसार वह बौद्ध धर्म के प्रश्रयी अवध के महामात्य रिपुदमन, महाप्रभु कल्याण और वैशाली के उपगणपति लक्ष्मीकांत की पात्र-सृष्टि और अयोध्या में राज्य-परिवर्तन, तथा, उसकी विफलता पर वैशाली में नवनिर्वाचन की घटनाओं का आयोजन करता है, जिनमें लक्ष्मीकांत के गणपति बनने पर बौद्धों का धर्म-विरोध, व्यक्ति-विरोध एवं व्यक्ति-विनाश से अन्ततः वैशाली के विध्वंस का निमित्त बनता है। " मारेलो अग्नि " में भी देसाई स्वातंत्र्य-प्राप्ति के लिये सशस्त्र-क्रांति की अपेक्षा अहिंसा के सिद्धान्त की सार्थकता व्यक्त करना चाहते हैं। इसीलिये उपन्यास में कैप्टन पीटर्स और पादरी जॉनसन के कथोपकथन, मंगल पांडे और रुद्रदत्त के रेवातट पर स्नान करते समय के वार्तालाप, और उसके प्रभाव से बचने के लिए मंगल पांडे के पलायन में; फाँसी पर मंगल पांडे के अंतिम विचारों में, तथा उपन्यास के अंत में युद्धभूमि में मरणासन्न गौतम और त्र्यम्बक तथा कल्याणी के कथोपकथन में रुद्रदत्त के वैचारिक व्यक्तित्व का प्रभाव प्रस्फुटित किया गया है।

" विराटा की पद्मिनी ", " चारु चन्द्र लेख ", "आम्रपाली " एवं " दीप निर्वाण " में कलागत उद्देश्य की दृष्टि से वातावरण का उपयोग किया

गया है। " विराटा की पद्मिनी " की कुमुद की देवी-रूप में ख्याति उसके दर्शनार्थ लोगों का आना-जाना कुमुद के अपूर्व सुन्दरी होने का तथा उससे आकृष्ट हो राजा नायक सिंह और सूबेदार अलिमर्दान के सिपाहियों का संघर्ष न केवल उनके विलासी चरित्र का उद्घाटन करता है, अपितु उस समय की सामाजिक घमाँघमी और विलासिता का भी चित्र प्रस्तुत करता है। राजा की मरणासन्न अवस्था में जनार्दन शर्मा का कुमार कुंवर सिंह को स्वत्व से वंचित कर, युद्ध में राजा के प्राण बचाने वाले दूल्हा देवीसिंह को राजा घोषित कर देना तथा राज्य-प्राप्ति पर देवीसिंह का अपनी उबटन मंडित वधू को भूल जाना, तत्कालीन छल-प्रपंच और स्वार्थ-वृत्ति के वातावरण को प्रकट करते हैं। विराटा की गढी, पास में बहती बेतवा, उसके द्वीप में मंदिर तथा उपन्यास के अन्त में समाधि से पूर्व कुमुद का मलिनियाँ कुल्वा ब्यावोरी - - - - - - - " उड गये कुल्वा रह गयी वास " - - - - - - - - पद का गाना आदि के दृश्य बुंदेलखंड की प्रकृति और वहाँ के लोक-मानस का मर्मस्पर्शी चित्र प्रस्तुत करते हैं। पालर में युद्ध का आतंक, कथावस्तु को विराटा की ओर ले जाता है, तो विराटा पर अलीमर्दान का आक्रमण, और दाँगियों के जौहर का निश्चय कथावस्तु को कुमुद-कुंवर की प्रणयाभिव्यक्ति और उपन्यास के करुण अंत की ओर ले जाता है।

" चारु चंद्र लेख " आत्मचरित शैली में लिखा गया ऐतिहासिक उपन्यास है। अतः इसका परिवेश, पात्रों के उद्बोधन अन्वेषणा, कथोपकथन, एवं कुछ पत्रों तथा लालित्यपूर्ण वर्णन द्वारा प्रस्तुत किया गया है। आरंभ में तुर्क सेना के समाचार की विद्याधर मट्ट द्वारा ओजस्वी प्रस्तुति, राजा सात वाहन और चंद्र लेखा को प्रजा के समक्ष ले जाती है, जहाँ वे प्रजा को उद्बुद्ध कर उसे संगठित करने में लग जाते हैं। प्रजा की अकिंचनता और राजकोष की रिक्तता, उसे इन लौकिक कष्टों से संसार को मुक्ति दिलाने वाले

नाग नाथ के कोटिवेधी रस की सिद्धि में लगा देती है। भगवती विष्णुप्रिया के आश्रम पर यवनों का आक्रमण, नागनाथ की हत्या के बाद वहाँ एकत्रित हुए राजा और रानी को फिर से अलग कर देता है। इसके प्रभाव से ही राजा आक्रमक युद्ध द्वारा शत्रु को नष्ट करने के लिये अशोक चल्ल से सैनिक सहायता की माँग करने उसके पास जाता है। इस प्रकार कृति में निरूपित वातावरण घटनाओं को मोड़ भी देता है, और पात्रों के चरित्र का उद्घाटन भी करता जाता है। यवनों द्वारा सिद्धों और योगियों की निर्मम हत्याएं युग की धर्मांधता व्यक्त करती हैं। इन्हें लक्ष्य कर अमोघ वज्र इस्लाम से भी प्रबल सामाजिक विचार अपनाने की आवश्यकता की ओर इंगित करता है। अक्षोभ्य भैरव युगीन दूषित राजनीति और रणनीति से ऊपर उठ प्रजा के सहयोग से राज्य करने की ओर अंगुलिनिर्देश करता है।[1] चंद्र लेखा के पत्र द्वारा कोटि वेधी रस की प्रक्रिया के रोमांचक अनुभव, नागनाथ की हत्या पर रानी के स्वास्थ्य पर उसका दुष्प्रभाव, विष्णुप्रिया की धर्मोपासना आदि के द्वारा तत्कालीन सांस्कृतिक और धार्मिक वातावरण का सम्यक् निरूपण हुआ है। यथावकाश इसमें युगीन आधुनिक समस्याएं भी व्यंजित की गई हैं। परिवेश की व्यापकता के कारण कोई सुधी समीक्षक इसे टूटा दर्पण[2] कहे, या साहित्येतर विधा[3], किंतु यह सत्य है कि कृति की संक्षिप्त कथा द्वारा जो देश-विदेश व्यापी विविध क्षेत्रीय परिवेश की यथार्थ विवृति की गई है,[4] वह वातावरण के निरूपण में उसकी कलात्मक सफलता की अभिव्यंजक है।

१ चारु चंद्र लेख, पृ० ४०९

२ श्री देवी शंकर अवस्थी, माध्यम, प्रवेशांक, मई, १९६४

३ श्री कन्हैयालाल ओझा, ज्ञानोदय, मार्च, १९६४

४ डा० रामनारायण सिंह मधुर, हिन्दी के ऐतिहासिक उपन्यास, पृ० १४९
प्रस्तुत उपन्यास में ऐतिहासिक यथार्थवाद का सफलता के साथ चित्रांकन हुआ है।

" आम्रपाली " " वैशाली की नगरवधू " के कथावस्तु को लेकर लिखा गया, दूसरा उपन्यास है । इसका ऐतिहासिक परिवेश ठीक वैसा ही है, जिसका अनुशीलन पूर्ववर्ती अध्याय में किया जा चुका है । " आम्रपाली " में लेखक दुर्बलता की स्थिति में ही विपक्ष पर आघात कर विजयी बनने के सिद्धान्त का निरूपण करने के लिए कृति को मगध और वैशाली के आन्तरिक संघर्ष तक ही सीमित रखता है । बिम्बसार द्वारा हल्लविहल्ल को एक कोटि सुवर्ण की मौक्तिक माला और सेचनाक हाथी देने, वैशाली के आंतरिक स्थिति में विघटन की आम्रपाली के स्वत्व का त्याग कर जनपद कल्याणी बनने, तथा अंत में मगध के आक्रमण का निवारण करने के लिए बिम्बसार से उत्पन्न पुत्र को शैशवावस्था में मगध भेजने की घटनाओं और विभिन्न प्रसंगों के निरूपण से तथा प्राचीन शब्दावली के प्रयोग से लेखक अपने लक्ष्य में सफल रहता है ।

" दीप निर्वाण " के आरंभ में आनंद के पितृ-वियोग और आक्रोश, तथा मातृ-वियोग से एवं आर्या गौतमी के पुत्र-वियोग से उत्पन्न भावनाशीलता के वातावरण में लेखक सुचरिता में आनन्द के प्रति सहज प्रेम का आविर्भाव कर साहचर्य भाव से आकृष्ट सुदत्त और सुचरिता में प्रेम के लिये आन्तरिक संघर्ष उत्पन्न करता है । नन्दिग्राम में वार्षिक समाज के समय यही संघर्ष ईर्ष्यावश सुदत्त से आनन्द के अश्व को विक्षत करवा देता है, एवं यथेष्ट दान के वचन से मुक्ति पाने के लिए सुचरिता को बौद्ध-भिक्षुणी (विहारिका) की दीक्षा के लिए बाध्य करता है । इस प्रकार यह प्रेम-वैफल्य सुदत्त को गण-द्रोह कर मगध सेना में उपस्थित कर देता है । उपर्युक्त मानसिक वातावरण एक ओर कथावस्तु की घटनाओं को नया मोड़ दे उन्हें आकर्षक बनाता है, तो दूसरी ओर पात्रों के चरित्र की विशेषताओं का उद्घाटन भी करता है । " समाज " में विविध विधाओं की प्रतियोगिताओं का आयोजन, उसमें हर्षोल्लास के साथ आमंत्रित गणों के युवक-युवतियों का भाग

लेना, विजेताओं पर पुष्पवृष्टि और उन्हें योग्य पुरस्कार से अभिनंदित करना, नियम भंग के लिए दंडविधान, किन्तु गणवासियों में सामान्यतः आदर और स्नेह की भावना गणों के सामाजिक और शैक्षणिक वातावरण को प्रस्तुत करते हैं। कठ गण के देव हुति का आर्या गौतमी के साथ प्रेम, परिणय, और पुत्रोत्पत्ति के पश्चात् बौद्धभिक्षु हो जाना, और नन्दिग्राम का कला-धाम सारिपुत्र विहार तत्कालीन धार्मिक और सांस्कृतिक वातावरण की अभिव्यक्ति हैं। मैनेन्द्र के आक्रमण के समय गणाधीशों की सभा में मगध के ऐक्य के प्रस्ताव की असहमति पर मगध-सेना का नन्दिग्राम पर आक्रमण साम्राज्यों की शोषण मूलक राजनीति का उद्घाटन करता है। कृष्णा को मैनेन्द्र की प्रेमिका के रूप में जानने पर शकों के आनन्दोल्लास के साथ उसे कष्टहीन प्रसूति और उनकी कुल-वृद्धि के आशीर्वाद उनकी वन्य-स्थिति व्यक्त करते हैं। घेरे में आठ कठ कन्याओं का हुतात्मा हो मगध सेना को विशृंखलित करना और घेरे को तोड़ मालवों के बचने का मार्ग प्रशस्त करना उनके गण-प्रेम का परिचायक है। आर्या गौतमी, सुचरिता, मैनेन्द्र और कृष्णा के जीवन में प्रेम का जीवन के नियामक तत्त्व के रूप में निरूपण अपना ही आकर्षण लिये हुए है। इस प्रकार लेखक युगीन परिवेश के निरूपण एवं वातावरण के द्वारा अपने कलागत उद्देश्य की प्राप्ति में सर्वथा सफल रहा है।

तुलना और निष्कर्ष :

प्रस्तुत विवेचन के आधार पर इस वर्ग के ऐतिहासिक उपन्यासों में वातावरण के स्वरूप और प्रयोग की दृष्टि से उन्हें निम्नांकित वर्गों में रखा जा सकता है।

(१) सिद्धान्त गत उद्देश्य की दृष्टि से वातावरण के अभीष्ट पक्ष को प्रस्तुत करने वाले उपन्यास,

(२) कलागत उद्देश्य की दृष्टि से वातावरण के समग्र स्वरूप को प्रस्तुत करने का उपन्यास.

" बहती रेता ", " मारेलो अग्नि " और " आम्रपाली " प्रथम वर्ग के उपन्यासों में आते हैं। इनमें लेखकों ने सम्बद्ध ऐतिहासिक तथ्यों के विश्लेषण के साथ अपने राजनीतिक सिद्धान्त और मान्यताओं की अभिव्यक्ति के लिये उपयुक्त वातावरण के अभीष्ट पक्ष का ही निरूपण किया है। " बहती रेता " में आर्यमत और बौद्ध धर्म के संघर्ष का निरूपण करने के साथ ही बौद्ध धर्म के अनुयायियों के धर्म-विरोध से व्यक्ति-विरोध और विध्वंस तक उतर आने के परिणाम स्वरूप वैशाली गण के विनाश का कारण बनने की लेखक की मान्यता अभिव्यक्त हुई है। लेखक ने अपनी रचना में अपने लक्ष्य के अनुरूप ईस्वी पूर्व पहली शताब्दी के राजनीतिक और धार्मिक वातावरण को प्रस्तुत किया है। " मारेलो अग्नि " में लेखक राजनीतिक लक्ष्य (स्वतंत्रता) की प्राप्ति के लिए अहिंसा के अंगीकार करने की अनिवार्यता प्रतिपादित करना चाहता है, इसीलिए १८५७ की क्रांति और उसकी विफलता की पृष्ठभूमि को निरूपित करता है। " आम्रपाली " में लेखक वैशाली और मगध की ऐतिहासिक स्थिति के परिप्रेक्ष्य में दुर्बल स्थिति में शत्रु पर आक्रमण कर विजय पाने के अपने राजनीतिक सिद्धान्त के लिए उपयुक्त आंतरिक विघटन से शत्रु को दुर्बल करने वाले वैशाली और मगध के राजनीतिक संघर्ष की संयोजना करता है।

द्वितीय वर्ग में आनेवाले उपन्यास हैं, " विराटा की पद्मिनी ", " चारुचन्द्र लेख " और " दीपनिर्वाण "। इनमें कलागत उद्देश्य की दृष्टि से राजनीतिक सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक परिवेश का निरूपण हुआ है। इनमें से " चारु चन्द्रलेख " में सांस्कृतिक निरूपण एवं " दीप निर्वाण " में गणों के सम्बद्ध सामाजिक और धार्मिक परिवेश की प्रस्तुति इनके विभेदक वैशिष्ट्य को इंगित करती है। " विराटा की पद्मिनी " में वर्माजी का बुंदेलखण्डीय प्रकृति-चित्रण अपने पूर्ववत् रूप में प्राप्य है।

शिल्प की दृष्टि से " विराटा की पद्मिनी " और " बहती रेता " में निरूपित वातावरण ~~सन्तिक~~ अधिक रुचिकर और प्रभावशाली है। गुजराती के " दीप निर्वाण " में भी वातावरण का यही स्वरूप दृष्टिगोचर होता है, जब कि " चारुचन्द्र लेख ", " आम्रपाली " और " मारेलो अग्नि " में उसकी सृष्टि वर्णन और कथोपकथन द्वारा की गयी है।

भाषा-शैली :

पूर्ववर्ती अध्यायों में ऐतिहासिक उपन्यास के लिये उपयुक्त भाषा-शैली के सम्बन्ध में उसके अपेक्षित स्वरूप और वैविध्य की हम विचारणा कर आये हैं। प्रस्तुत वर्ग के ऐतिहासिक उपन्यासों में प्रयुक्त भाषा-शैली के अध्ययन के लिये वही आधार ग्रहण करना समीचीन होगा।

१ भाषा में कथावस्तु के वहन और उसके परिवेश निरूपण की क्षमता :

प्रस्तुत अध्याय के हिन्दी और गुजराती के वातावरण प्रधान ऐतिहासिक उपन्यासों में कथावस्तु अधिकांशतः कल्पनाश्रित हैं, किन्तु उनका परिवेश, जिसमें उन्हें प्रस्तुत किया गया है, वह ऐतिहासिकता लिये हुए है। इस वर्ग की कृतियों के अध्ययन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि उनकी प्रस्तुति बहुत ही रोचक ढंग से हुई है। पाठक रुचि के साथ ~~कि~~ केवल उपन्यास ही नहीं पढता, अपितु कृति के परिवेश की प्रतीति भी करता जाता है। प्रस्तुत वर्ग के उपन्यासों में भाषा की यही स्थिति उसके वस्तु-वहन की परिचायक है, जो परवर्ती विवेचन से स्पष्ट है।

उपन्यास के मनोरम प्रारम्भ के पश्चात् पात्रों को जीवन्त और प्रभावशाली रूप में प्रस्तुत करने में भाषा के सामर्थ्य के दर्शन होते हैं।

" चारुचन्द्र लेख " में राजा सात वाहन द्वारा चन्द्र लेखा के प्रथम दर्शन का चित्र यहाँ उल्लेखनीय है — " जिसे मैंने लाल पल्लवोंवाली बाला समझा था, वह अपूर्व सुन्दरी देवबाला थी । उसके कौसुम्मी वस्त्रों को देख कर मुझे लाल किसलयों का भ्रम हो गया था । उसके एक हाथ में थाली थी और दूसरे में मृंगार । मृगछौना उसकी साड़ी में छिपाकर इस प्रकार सो गया था, जैसे भयत्रस्त बालक माँ की गोद में सो जाता है । " [1] यहाँ वन की प्राकृतिक पृष्ठभूमि में चन्द्रलेखा के अप्रत्याशित प्रथम दर्शन का मोहक दृश्य बड़े ही सहज रूप में अंकित हुआ है । " दीप निर्वाण " की सुचरिता भी प्रातःकाल में ब्राह्मणक सेनानी आनन्द को कुछ ऐसे ही रूप में दृष्टि गोचर होती है — " सूर्य की किरणें उसकी केशराशि पर आई हुई थीं, सूर्य की किरणों से भी ये बाल सुंदर थे । ग्रीवा की भंगिमा, वीणा के तार पर फिरती गुलाब की पत्तियों जैसी उंगलियाँ, चन्द्रमा के तेज पुंज से निर्मित किया हो ऐसा सुन्दर मुख, आनन्द को लगा मानो वीणा धारिणी सरस्वती ही यहाँ बैठी हो । [2] यहाँ बड़ी ही परिष्कृत और अलंकृत भाषा में सुचरिता के सौन्दर्य की मनोहर रेखाकृति प्रस्तुत कर दी गई है ।

पात्रों के परिचय के उपरान्त उनसे सम्बन्धित पात्रों पर उनके व्यक्तित्व का अपना प्रभाव होता है । इसका निरूपण एक ओर सम्बन्धित पात्रों में स्वाभाविकता को व्यक्त करता है, तो दूसरी ओर पाठकों की बुद्धिपरकता और रागात्मकता को भी संतुष्ट करता चलता है । चंद्रलेखा को पहली बार देखने पर नागनाथ पर पड़े उसके प्रभाव का चित्रण देखिये — " देवि, अपूर्व देख रहा हूँ तुम्हारी शोभा । मेरी नस-नस आज उल्लास से

---

1 चारुचंद्र लेख, पृ० 3

2 दीप निर्वाण, पृ० 4

चंचल है। बहत्तर सहस्र नाड़ियों में अपूर्व शक्ति-धारा प्रवाहित हो गई है, दसों प्राण आज उच्छ्वसित हो उठे हैं, रक्त में एक विचित्र आंधी बह रही है। देवि, आज मेरे ग्रहगण प्रसन्न हैं। आज सविता का उदय सार्थक है, आज गंगा की धारा सफलकाम है, आज मेरी सिद्धि मिल गई है।"[1] यहां चन्द्रलेखा के दर्शन पर नागनाथ के विस्मय, उल्लास और आनन्द बड़ी काव्यात्मकता के साथ अभिव्यक्त हुए हैं।

उपन्यास के पात्रों के अतिरिक्त परिवेश और परिस्थितियों के निरूपण में भी भाषा का अद्भुत कौशल आवश्यक है। प्रस्तुत वर्ग के उपन्यासों में वातावरण का अनुशीलन करते हुए इसका सविस्तार विवेचन कर आये हैं। उदाहरणार्थ वैशाली गणतंत्र के जन-जीवन की स्थिति का एक चित्र यहां द्रष्टव्य है - "अन्यत्र समस्त भारत में उत्सवों के लिये अमुक दिन थे - - - - - - - किन्तु वैशाली में तो हरेक के हर पल उत्सव ही था। लिच्छवी युवक अश्व पर बैठे, या रथारूढ़ हो, धनुष कंधे पर हो, उनका परम विश्वास-पात्र श्वान साथ निकला कि उसका उत्सव शुरू हुआ। यह नगरी ही मानो उल्लास की नगरी हो।"[2] यहां इन पंक्तियों में वैशाली निवासियों के उल्लासपूर्ण और उत्सवप्रिय जीवन का एक सहज चित्र उभर आता है।

२ शैली-वैविध्य का कृति के उत्कर्षापकर्ष में योगदान :

पूर्ववर्ती पृष्ठों में कृति के घटना-प्रसंग, पात्रों के चारित्रिक विकास और परिस्थिति निरूपण के संदर्भ वर्णनप्रधान शैली के व्यापक प्रयोग का एक विहंगावलोकन हम कर आये हैं। प्रस्तुत वर्ग के उपन्यासों में

१ चारुचन्द्र लेख, पृ० २३

२ आम्रपाली, पृ० ८९

वर्णनप्रधान शैली के कई मनोरंजक चित्र प्राप्य हैं। मगध के महामात्य वर्षकार द्वारा देखी हुई वैशाली की शोभा का दृश्य यहाँ उल्लेखनीय है - " सामने सैकड़ों और हजारों रमणीय प्रासादों से सुशोभित एक महानगरी दिखाई देती थी। इसके उत्तुंग नगर-प्राकार से ऊपर उठकर दूर आकाश के साथ बातें करने वाली सुन्दर हवेलियाँ शोभायमान हो रही थीं। किसी के शिखर पर ताम्रकलश चमक रहे थे, कई स्थलों पर रजत कुम्भों पर ध्वजाएं फहरती थीं। सैकड़ों और हजारों स्वर्ण मंडित शिखरों पर केका करते मयूर बैठे थे। इनकी आंख में रखे हुए लाल मरकत मणि में से अपूर्व सी प्रकाश किरणें फैल रही थीं।"[1] वैशाली के इस मनोरम वर्णन से एक ओर जहाँ उसकी समृद्धि और सम्पन्नता व्यक्त होती है, वहाँ, ताम्र, रजत और स्वर्ण मंडित कलशों से इसके विविध कोटि के निवासियों की स्थिति भी ध्वनित होती है। प्रस्तुत वर्ग के उपन्यासों से नगर, प्रकृति, और अन्य विषय-वस्तु सम्बन्धी वर्णन प्रधान शैली के ऐसे कतिपय उद्धरण प्रस्तुत किये जा सकते हैं।

इस वर्ग के उपन्यासों में " चारुचन्द्र लेख " आत्मचरित शैली में लिखा गया उपन्यास है। अतः इसमें कथोपकथन का प्राचुर्य है, किन्तु इस पर भी इसके पात्र कथोपकथन में, कहीं उद्बोधन और कहीं निजी अनुभूतियों की अभिव्यक्ति में जब गहरे उतरते हैं, तो वहाँ भी वर्णनात्मकता उभरती दिखाई देती है। इसके अतिरिक्त अन्य उपन्यास यद्यपि वर्णनप्रधान शैली में लिखे गये हैं, किन्तु पात्रों को सहज स्वाभाविक रूप देने के लिये एवं कथावस्तु में रोचकता उत्पन्न करने के लिए उनमें भी नाटकीय शैली का पर्याप्त प्रयोग किया गया है।

---

१ आम्रपाली, पृ० ९०

वर्णनप्रधान शैली और नाट्यात्मक शैली के साथ यथावश्यक विश्लेषणात्मक शैली और भाव-प्रधान शैली का भी प्रयोग दिखाई देता है। आचार्य शीलभद्र की सेवार्थ शिशु आनंद को छोड़ते समय पत्नी और मां में विभक्त आर्या गौतमी का मनोमंथन यहां द्रष्टव्य है -- " रे मिथ्याचारिणी कैसी छलना करके तू जा रही है, किसके साथ छल कर रही है, पता है ? जिसने तुझे छोड़ा, सबको छोड़ा वह तेरा पति कैसे ? मृग मरीचिका के पीछे वहां कहां नष्ट होने जा रही है। अपने संन्यास में किसका नैवेद्य देने बैठी है ? अपनी संतान का, अपने ही मातृत्व का ? " [१] यहां संन्यासी पति की सेवा के लिये पुत्र का त्याग करने वाली मां के हृदय का मर्मस्पर्शी विश्लेषण हुआ है। आनंद के पिता की प्रतीक्षा में भावोद्वेलन और उसकी हृदय स्पर्शी अभिव्यक्ति भावना-प्रधान शैली का उत्तम उदाहरण प्रस्तुत करती है। प्रतीक्षा से हार कर सिंधु में गिरने वाले आनंद को उसकी मृत्यु से दुःखी होने वाली मां का ख्याल आते ही वह सिंधु से बाहर निकल आता है, और कहता है - " नहीं आये, भले ही नहीं आये, हमें तुम्हारे बिना चलेगा। " वह बोल रहा था, इतने में " मैं आई - - - आई " कहते हुए स इसको किसने बाहुओं में ले लिया ? और वह इतना ही बोल सका " पिताजी नहीं आये। " नदी और वन को भी रुलावे, ऐसे मां-बेटे के रुदन की स्मृति ही आज इसे हिला देती है। " [२] यहां थोड़े से शब्दों के द्वारा ही लेखक ने मां-बेटे में पितृ-वियोग और पति-वियोग से उत्पन्न भावसमरता व्यक्त कर दी है।

वर्माजी के अन्य उपन्यासों की भांति " विराटा की पद्मिनी " में भी यथास्थान बुंदेलखंडी प्रयोग दृष्टिगत होते हैं। बेतवा में

---

१ दीप निर्वाण, पृ० १५

२ वही, पृ० १६

समाधि लेने से पूर्व कुमुद का बुंदेलखण्डी गीत —

" मलिनियां फुलवा ल्याओ नंदनवन के,
बीन बीन फुलवा लगाई बड़ी रास,
उड गये फुलवा रह गई बास । "

मलिनियां - - - से उन्होंने उपन्यास का बड़ा मार्मिक अन्त प्रस्तुत किया है । प्रस्तुत वर्ग के गुजराती के उपन्यासों में स्थानीय प्रयोग दृष्टिगत नहीं होता ।

पात्रों की भाषा उनके चरित्र की परिचायक होती है । अतः प्राचीन काल के पात्र और उनके परिवेश का निरूपण करते समय यह ध्यान रखना आवश्यक है कि भाषा उनकी ऐतिहासिकता के अनुरूप है। प्रस्तुत वर्ग के उपन्यासों में " बहती रेता ", " आम्रपाली ", और " दीप निर्वाण " प्राचीन भारत के बौद्ध-काल से सम्बन्धित उपन्यास हैं । इनमें सम्बद्धकाल और पात्रों के अनुरूप शब्दावली का प्रयोग हुआ है । निम्नांकित शब्द तत्युगीन गणराज्य की प्रणाली के द्योतक हैं — गणाधीश (गणपति) नगर श्रेष्ठी (नगर-सेठ) कार्षापण (मुद्रा), कंटक शोधक (पुलिस अधिकारी) संथागार (सभा भवन) पुष्करिणी (सरोवर) सर्वार्थ (गुप्तचर) राजन्य(राजकुमार) गणक (मुनीम) हस्तिगोपक (महावत) आवुसो (आयुष्मान्) । इनका प्रयोग सहज ही पाठक के सम्मुख बौद्धकालीन गणों के वातावरण की मानस-सृष्टि उपस्थित करने में सहायक होता है । आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का चारु चंद्र लेख मध्यकाल के आरंभ से सम्बन्धित है, किन्तु उस समय तक अरबी-फारसी के व्यापक प्रयोग के अभाव में उनके द्वारा प्रयुक्त तत्सम् शब्दावली का प्राचुर्य कालक्रमानुरूप ही ठहरता है । " विराटा की पद्मिनी " और " भारेलो अग्नि " में प्रयुक्त भाषा पात्र और परिस्थिति के सर्वथा अनुरूप है।-

सारतः प्रस्तुत वर्ग के उपन्यासों में प्रयुक्त भाषा सरल और

समृद्ध है एवं पात्र, और परिस्थिति के अनुरूप उसका बदलता हुआ स्वरूप, शैली की विविधता, अलंकारों का प्रयोग तथा प्रादेशिक और युगीन शब्दावली का उपयोग उसकी बहुमुखी क्षमता के परिचायक हैं ।

उद्देश्य और जीवन-दर्शन :

पूर्ववर्ती अध्यायों में निर्दिष्ट किये उद्देश्य के विभिन्न स्वरूपों के अनुसार प्रस्तुत अध्याय के उपन्यासों को भी निम्नांकित वर्गों में रखा जा सकता है ।

१ अतीत के प्रति प्रेम और उसका पुनः संस्थापन करने वाले उपन्यास ,

२ अतीत की आधुनिक व्याख्या और उसके द्वारा वैयक्तिक दृष्टिकोण की अभिव्यक्ति वाले उपन्यास .

१ " विराटा की पद्मिनी " उपर्युक्त प्रथम उद्देश्य को लेकर लिखा गया उपन्यास है । इसमें लेखक सामंती-प्रथा के एवं सामाजिक धर्मांधता के दोषों के निरूपण, एवं उनके उन्मूलन द्वारा समाज में स्वस्थ जीवन की स्थापना का निर्देश करता है ।

२ " बहती रेता ", " चारु चन्द्र लेख ", " मारेलो अग्नि ", " आम्रपाली " और " दीप निर्वाण " उपरि निर्दिष्ट द्वितीय उद्देश्य को लेकर लिखे गये हैं । " बहती रेता " में लेखक गणतंत्र-प्रधान वैशाली और राज्यतंत्र-प्रधान अयोध्या के धर्मप्रेरित राजकीय संघर्षों को गणों के विनाश का कारण बताता है । उसकी मान्यता है कि धर्म-विरोध धर्म विशेष के दोषों के परिहार तक वांछनीय कहा जा सकता है, किन्तु यदि वह व्यक्ति-विरोध और फिर व्यक्ति-विनाश तक उतर आए तो वह वांछनीय नहीं रहता ।

" चारु चंद्र लेख " में लेखक सातवाहन और चंद्र लेखा के कथावस्तु के सहारे हमारी (तद् युगीन) राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिक

~~कमियों~~ त्रुटियों को इंगित कर (आधुनिक परिवेश में भी) उनके निवारण के लिये अपने सुझाव प्रस्तुत करता है । वंशक्रमानुगत राज्याधिकार वाली दूषित राजनीति, " युद्ध करना राजा और सेना का काम है, प्रजा का नहीं " धारणा वाली दूषित रणनीति, बाहु-बल की अपेक्षा मंत्र-तंत्र पर विश्वास रखने वाली धार्मिक भावना, जाति और धर्मगत भेदभाव से शोषण करने वाली सामाजिक अवस्था जैसी ~~कमियों~~ त्रुटियों को निरूपित कर राजनीति और रणनीति में प्रजा के सहयोग और ऐक्य, धार्मिक उपासनाओं की अपेक्षा बाहु-बल का आश्रय, तथा जाति और धर्मगत भेदभाव के स्थान पर राष्ट्रीयता के क्रियान्वित संकल्प के सुझाव से उनके निवारण का मार्ग इंगित करता है ।

" भारेलो अग्नि " में क्रांति के निमित्त और उसकी विफलता के कारणों का निरूपण करने के उपरांत शस्त्र-युद्ध की असारता व्यक्त कर लेखक सत्य और अहिंसा को मानव-प्रेम और शांति के एक मात्र मार्ग के रूप में बताना चाहता है ।

" आम्रपाली " में लेखक वैशाली और मगध के आन्तरिक संघर्षों में आम्रपाली के त्याग और बलिदान द्वारा यह इंगित करता है कि व्यक्ति गण (राष्ट्र) से बड़ा नहीं है, राष्ट्र व्यक्ति से बड़ा है, इसी ~~आदर्श~~ आदर्शानुसार आचरण किया जाये, तो भ्रष्टाचार के लिये कोई स्थान नहीं रहे ।

" दीप निर्वाण " में प्राचीन गणों के गौरव के आलेखन के साथ लेखक सूचित करता है कि प्रत्येक राष्ट्र को युग की शक्ति को समझ कर अपनी गतिविधि निश्चित करनी चाहिये । बाह्य आक्रमणों से आत्मरक्षा के लिये देश में संवेदन पूर्ण समन्वय की स्थापना भी उतनी ही आवश्यक है । [1]

१ श्री उमाशंकर जोशी, मनहर-मनहर (दीप निर्वाण), पृ० २१

उपर्युक्त अनुशीलन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि 'विराटा की पद्मिनी' को छोड कर शेष सभी उपन्यासों में अतीत का निजी दृष्टि से आलेखन और अपने दृष्टिकोण की अभिव्यक्ति की गई है। इनमें से उद्देश्य की दृष्टि से "चारन चंद्र लेख" और "दीप निर्वाण" का धरातल राष्ट्र व्यापी है।

तुलनात्मक-विश्लेषण :

हिन्दी और गुजराती के वातावरण-प्रधान ऐतिहासिक उपन्यासों में तीन प्रकार के उपन्यास हैं। प्रथम कोटि में "चारन चंद्र लेख" और "आम्रपाली" आते हैं। इनके कथावस्तु ऐतिहासिक पात्रविशेष एवं घटना-विशेष से सम्बद्ध हैं। "चारन चंद्र लेख" में नाथपंथ की सिद्धियों और वैष्णवी उपासना जैसे कथावस्तु के विविध अंशों का लालित्य पूर्ण वर्णन इसकी खास विशेषता है। "आम्रपाली" में कूटनीतियों के आकर्षक प्रयोग और रोमांस हैं। दूसरी कोटि का उपन्यास है "विराटा की पद्मिनी" जिसका कथा-वस्तु जनश्रुतियों पर आधारित है। बुंदेलखंड की पृष्ठभूमि में उसकी प्रस्तुति उसे रोचक और विश्वसनीय बनाती है। तीसरे प्रकार के उपन्यास हैं, "बहती रेता", "मारेलो अग्नि" और "दीप निर्वाण"। तीनों इतिहास के काल-विशेष पर आधारित और सोद्देश्य हैं।

हिन्दी के प्रस्तुत वर्ग के ऐतिहासिक उपन्यासों में आने वाले पात्र सम्बद्ध काल के मानव-जीवन को समग्र रूप में प्रस्तुत करते हैं। "विराटा की पद्मिनी" के पात्र सामंती युग के मानव-जीवन को प्रस्तुत करते हैं। "बहती रेता" और "चारन चन्द्र लेख" में अपने समय के राजा, गणपति, मंत्री, सैनिक, गुप्तचर, व्यापारी, बौद्धभिक्षु, सिद्धयोगी, फकीर, नट, चारण, प्रजा तथा तुर्क आदि सभी क्षेत्र के लोक-जीवन की अभिव्यक्ति हुई है। "मारेलो अग्नि"

और " आम्रपाली " के पात्र अपने सम्बद्ध सैनिक राजनीतिक क्षेत्र को प्रकट करते हैं। " दीप निर्वाण " में बौद्धकालीन गणों का जीवन उभर आया है।

" बहती रेता ", " मारेलो अग्नि " और " आम्रपाली " में लेखकों ने अपने लक्ष्य की दृष्टि से राजनीतिक वातावरण को अपने अपने ढंग से प्रस्तुत और प्रयुक्त किया है। " बहती रेता " में राजनीतिक संघर्ष के मूल में बौद्ध धर्म के होने के कारण धार्मिक परिवेश का निरूपण किया गया है। " विराटा की पद्मिनी ", " चारन चन्द्र लेख " और " दीप निर्वाण " में लेखकों के सामने केवल कलागत उद्देश्य के होने से उन्होंने कृतियों के काल-विशेष के वातावरण को जीवन्त और प्रभावशाली रूप में प्रस्तुत किया है। " विराटा की पद्मिनी " में सामन्ती युग को तथा " चारन चंद्र लेख " एवं " दीप निर्वाण " में अपने अपने काल के सम्बद्ध राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक वातावरण को पूर्ण सजीवता के साथ निरूपित किया गया है।

इन रचनाओं में प्राप्त वस्तु और शिल्पगत साम्य और वैषम्य इस प्रकार हैं :-

साम्य :
००००००

(क) इस वर्ग के हिन्दी और गुजराती के उपन्यासों में लेखकों ने प्राप्य ऐतिहासिक पात्र या घटना के अतिरिक्त कल्पना का स्वच्छन्द प्रयोग किया है,

(ख) वातावरण को लक्ष्य कर कथावस्तु, पात्र, और प्रसंगों की सृष्टि की है,

(ग) वातावरण का उपयोग सिद्धान्त और शिल्प की दृष्टि से किया है, और

(घ) गण या राष्ट्र के लिये उत्सर्ग की भावना के प्रति अंगुलि-निर्देश।

वैषम्य :
०००००००

(क) प्रस्तुत वर्ग के हिन्दी के उपन्यासों के पात्र मानव-जीवन के समग्र स्वरूप को प्रस्तुत करते हैं, जबकि गुजराती के उपन्यासों में सम्बद्ध अंश-विशेष ही अभिव्यक्त हुआ है ।

(ख) हिन्दी के ऐतिहासिक उपन्यास आधुनिक युग-बोध और यथार्थ की चेतना से युक्त हैं । उनके अतीत से सम्बन्धित होते हुए भी उनके परिवेश में पाठकों को अपना वर्तमान प्रतिबिम्बित होता दिखाई देता है । गुजराती के उपन्यासों में इसका अभाव है ।

(ग) हिन्दी के " विराटा की पद्मिनी " में बुंदेलखंडी प्रकृति का चित्रण उसकी निजी विशेषता है, जो गुजराती के ऐतिहासिक उपन्यासों में नहीं मिलती ।

(घ) हिन्दी के " चारु चन्द्र लेख " में सांस्कृतिक निरूपण उसका वैशिष्ट्य है, व गुजराती में इसके समकक्ष कोई कृति नहीं है । " दीप निर्वाण " में भी गणों के सम्बद्ध सामाजिक और अंशतः धार्मिक परिवेश की ही प्रस्तुति है ।

(च) हिन्दी के उपन्यासों में युगीन वातावरण का समग्रतया चित्रण दृष्टिगत होता है, गुजराती के ऐतिहासिक उपन्यास परिवेश-विशेष का ही निरूपण करते हैं ।

हिन्दी और गुजराती के वातावरण-प्रधान ऐतिहासिक उपन्यासों के अध्ययन के अनन्तर पूर्वनिर्दिष्ट वर्गीकरण के अनुसार आगामी अध्याय में कल्पना-प्रधान ऐतिहासिक उपन्यासों का अध्ययन प्रस्तुत किया जाएगा ।

०००००००